करें (चित्र 13.3. अ)। आप स्पष्टत: प्रकाश के दृश्य स्पेक्टम की तरंगदैर्ध्यता एवं विबग्योर (**vibgyor**) से परिचित हैं।

चित्र 13.3 अ को देखकर क्या आप बता सकते हैं कि किस तरंगदैर्ध्य पर क्लोरोफिल 'ए' अधिकतम अवशोषण करेगा? क्या यह किसी अन्य तरंगदैर्ध्यता पर कोई अन्य अवशोषण चोटी दिखाते हैं? यदि हाँ तो वे कौन हैं?

अब आप चित्र 13.3 (ब) को देखें जिसमें उन तरंगदैर्ध्यों को दिखाया गया है, जहाँ पर पादप में अधिकतम प्रकाश-संश्लेषण होता है। क्या आप देख रहे हैं कि तरंगदैर्ध्य क्लोरोफिल *'ए'* अर्थात् नीला तथा लाल क्षेत्र में अवशोषण करता है, उस क्षेत्र में प्रकाश-संश्लेषण की दर भी अधिकतम है। अत: हम कह सकते हैं कि क्लोरोफिल *'ए'* प्रकाश-संश्लेषण के लिए एक प्रमुख वर्णक है *लेकिन चित्र 13.3(स) देखने पर क्या आप कह सकते हैं कि क्लोरोफिल 'ए' के अवशोषण स्पेक्टम तथा प्रकाश-संश्लेषण के क्रियात्मक स्पेक्ट्रम के बीच पूर्णत: परस्पर व्यापन है?*

ये ग्राफ, एक साथ यह बता रहे हैं कि अधिकतम प्रकाश-संश्लेषण स्पेक्ट्रम के नीले एवं लाल क्षेत्र में संपन्न होती है, और कुछ प्रकाश-संश्लेषण स्पेक्ट्रम की अन्य तरंगदैर्ध्यो पर भी संपन्न होती है। आइए, देखें कि यह कैसे होता है। यद्यपि क्लोरोफिल *'ए'* प्रकाश को अवशोषित करने का मुख्य वर्णक है, फिर भी अन्य थाइलेकोइड में वर्णक जैसे क्लोरोफिल *बी*, जैन्थोफिल तथा केरोटिन, जिन्हें सहायक वर्णक कहते हैं, वे प्रकाश को अवशोषित करते हैं तथा अवशोषित ऊर्जा को क्लोरोफिल ए में स्थानांतरित कर देते हैं। वास्तव में ये वर्णक न केवल प्रकाश-संश्लेषण को प्रेरित करने वाली उपयोगी तरंगदैर्ध्य के क्षेत्र को बढाते हैं बल्कि ये क्लोरोफिल *'ए'* को फोटोऑक्सीडेसन से भी बचाते हैं।

13.5 प्रकाश अभिक्रिया क्या है?

प्रकाश अभिक्रिया अथवा 'प्रकाशरसायन' चरण में प्रकाश अवशोषण, जल विघटन, ऑक्सीजन निष्कर्षण तथा उच्च-ऊर्जा रसायन माध्यमिकों, जैसे एटीपी तथा एनएडीपीएच का निर्माण शामिल है। इस प्रक्रिया में अनेक कॉम्पलेक्स सम्मिलित होते हैं। यहाँ वर्णक दो सुस्पष्ट प्रकाश रसायन **लाइट हार्वेस्टिंग कॉम्पलेक्स (एलएचसी)** जिन्हें **फोटोसिस्टम I (पीएस I)** तथा **फोटोसिस्टम II (पीएस II)** कहते हैं - में गठित होता है। इन्हें खोज के क्रम में ये नाम दिए गए हैं न कि प्रकाश अभिक्रिया के दौरान उनके काम करने के अनुक्रम में। एलएचसी प्रोटीन से आबद्ध हजारों वर्णक अणुओं से बने होते हैं। प्रत्येक फोटोसिस्टम में सभी वर्णक होते हैं, (सिवाय क्लोरोफिल *'ए'* के एक अणु के) तथा एलएचसी का निर्माण करते हैं जिन्हें **ऐन्टेनी** कहते हैं (चित्र 13.4)। ये वर्णक विभिन्न तंरगदैर्घ्यों के प्रकाश को अवशोषित कर प्रकाश-संश्लेषण को अधिक दक्ष बनाते हैं। क्लोरोफिल

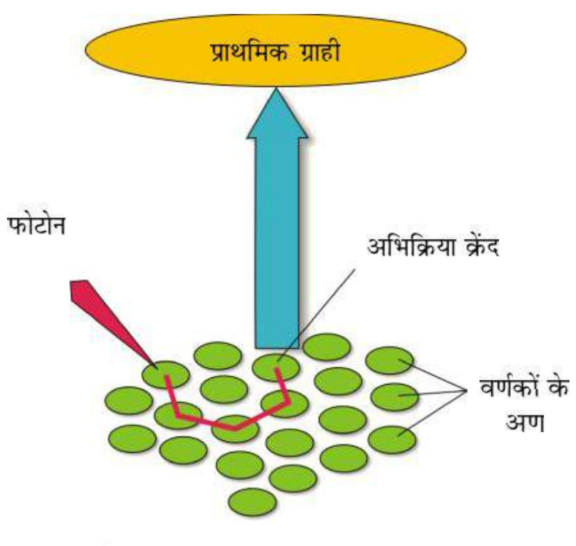

चित्र 13.4 प्रकाश संग्रहण तंतजाल

'ए' का एक अकेला अण **अभिक्रिया केंद्र** बनाना है। दोनों फोटोसिस्टम में प्रतिक्रिया केंद्र पृथक होते हैं। पीएस I में अभिक्रिया केंद्र क्लोरोफिल *'ए'* का अवशोषण शीर्ष 700 एनएम (nm) पर होता है अतः इसे **पी 700** कहते हैं। पीएस II में अवशोषण शीर्ष 680 एनएम (nm) पर होता है अत: इसे **पी 680** कहते हैं।

13.6 इलेक्टॉन परिवहन

फोटोसिस्टम II में अभिक्रिया केंद्र में मौजूद क्लोरोफिल *'ए'* 680 एनएम वाले लाल प्रकाश को अवशोषित करता है, जिससे इलेक्ट्रॉन उत्तेजित होकर परमाणु नाभिक से दूर चला जाता है। इसे इलेक्ट्रॉन को एक इलेक्ट्रॉन *ग्राही* ले लेता है और इन्हें **इलेक्ट्रॉन्स ट्रांसपोर्ट सिस्टम** जिसमें साइटोक्रोम होते हैं, पहुँचा दिया जाता है (चित्र 13.5)। इलेक्ट्रॉन की यह गतिविधि अधोगामी है जो अपचयोपचय विभव मापन (रिडैक्स पोटेंशियल स्केल) के रूप में है। जब इलेक्ट्रॉन्स परिवहन शृंखला से इलेक्ट्रॉन्स गुजरते हैं तब उनका उपयोग नहीं होता बल्कि उन्हें फोटोसिस्टम पीएस I के वर्णकों को दे दिया जाता है। इसके साथ ही साथ, पीएस I का अभिक्रिया केंद्र के इलेक्ट्रॉन भी लाल प्रकाश की 700 एनएम तरंगदैर्ध्य को अवशोषित कर उत्तेजित होता है और यह अन्य ग्राही अणु में जिसका अपचयोपचय (रिडौक्स) विभव अधिक हो, स्थानांतरित होता है। ये इलेक्ट्रॉन्स पुनः अधोगामी गति करते हैं, परंतु इस बार वे ऊर्जा से प्रचुर एनएडीपी$^+$ अणु की ओर जाते हैं। ये इलेक्टॉन्स एनएडीपी$^+$ को अपचयित कर एनएडीपीएच$^+$ H^+ को बनाते हैं। इलेक्ट्रॉन के स्थानांतरण की यह सारी योजना पीएस II से शुरू होकर शिखरोपरिग्राही की ओर, इलेक्ट्रॉन परिवहन शृंखला से होते हुए पीएस I तक, इलेक्ट्रॉन की उत्तेजना, अन्य ग्राही में स्थानांतरण और अंतः में अधोगामी होकर एनएडीपी$^+$ को अपचयित कर एनएडीपीएच$^+$ H^+ के बनने तक होती हैं। यह सारी योजना Z के आकार की होती है, इसलिए इसे **Z स्कीम** कहते हैं (चित्र 13.5)। यह आकृति तब बनती है जब सभी वाहक क्रमानसार एक अपचयोपचय विभव माप पर हों।

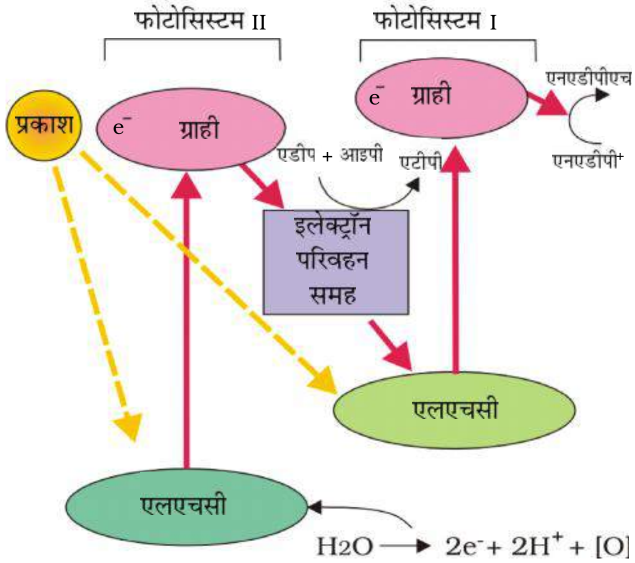

चित्र 13.5 प्रकाश अभिक्रिया की *Z*- स्कीम

13.6.1 जल का विघटन

अब आप पूछेंगे कि *पीएस II कैसे इलेक्ट्रॉन की आपूर्ति निरंतर करता है?* वे इलेक्ट्रॉन जो फोटोसिस्टम II में निकलते हैं, उनकी जगह निश्चित ही दूसरों को लेनी चाहिए। जल विघटन का संबंध पीएस II से है। जल H^+, [O] तथा इलेक्ट्रॉन में विघटित होता है। इससे ऑक्सीजन उत्पन्न होती है, जो प्रकाश–संश्लेषण का एक शुद्ध उत्पाद है। फोटोसिस्टम I से निकलने वाले इलेक्टॉन. फोटोसिस्टम II से उपलब्ध कराए जाते हैं।

$$2H_2O \longrightarrow 4H^+ + O_2 + 4e^-$$

हमें यह अच्छी प्रकार जान लेना चाहिए कि *जल विघटन* पीएस II से संबंधित है जो थाइलेकोइड की झिल्ली की भीतरी ओर होता है। *तब इस दौरान बनने वाले प्रोटोन्स एवं O_2 कहां मुक्त होते हैं- अवकाशिका (ल्यूमेन) में अथवा झिल्लिका के बाहर की ओर?*

13.6.2 चक्रीय एवं अचक्रीय फोटो-फोस्फोरीलेशन

जीवों में ऑक्सीकरणीय पदार्थों से ऊर्जा निकालने तथा उसे बंध-ऊर्जा के रूप में संचय करने की क्षमता होती है। विशेष पदार्थ जैसे एटीपी, इस ऊर्जा को अपने रासायनिक बंध में संजोये रखती हैं। कोशिकाओं द्वारा (माइटोकोंड्रिया तथा क्लोरोप्लास्ट में) एटीपी के संश्लेषण की प्रक्रिया को फोस्फोरीलेशन कहते हैं। फोटो-फोस्फोरीलेशन वह प्रक्रिया है जिसमें प्रकाश की उपस्थिति में एडीपी तथा अकार्बनिक फोस्फेट से एटीपी का संश्लेषण होता है। जब दो फोटोसिस्टम क्रमिक कार्य करते हैं जिसमें पीएस II पहले और पीएस I दूसरे क्रम में कार्य करें तो इस प्रक्रिया को अचक्रीय फोटो-फॉस्फोरीलेशन कहते हैं। ये दोनों फोटोसिस्टम एक इलेक्ट्रॉन परिवहन शृंखला से जुड़े होते हैं जैसे कि पहले Z स्कीम में देख चुके हैं। एटीपी तथा एनएडीपीएच + H+ दोनों ही इस प्रकार के इलेक्टॉन प्रवाह द्वारा संश्लेषित होते हैं (चित्र *13.5*)।

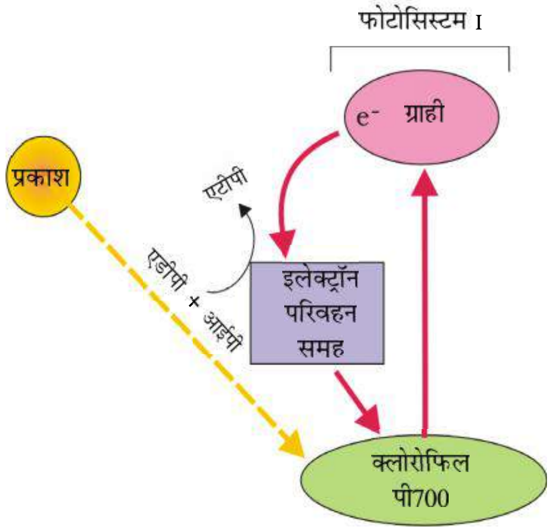

चित्र 13.6 प्रकाश अभिक्रिया की *Z*- स्कीम

जब केवल पीएस I क्रियाशील होता है, तब इलेक्ट्रॉन फोटोसिस्टम में ही घूमता रहता है और फोस्फोरीलेशन इलेक्ट्रॉन चक्रीय प्रवाह के कारण होता है (चित्र 13.6)। यह प्रवाह संभवतः स्ट्रोमा लैमिली में होती है। ग्राना की झिल्ली अथवा लैमिला में पीएस I एवं पीएस II, दोनों ही होते हैं, जबकि स्ट्रोमा लैमिली झिल्लियों में पीएस II एवं एनएडीपी रिडक्टेस एंजाइम नहीं होते हैं। उत्तेजित इलेक्ट्रॉन एनएडीपी+ में पारित नहीं होता, बल्कि वापस पीएस I कॉम्पलेक्स में इलेक्ट्रॉन प्रवाह शृंखला द्वारा चक्रित होता रहता है (चित्र 13.6)। अतः चक्रीय प्रवाह में केवल एटीपी का संश्लेषण होता है न कि एनएडीपीएच + एच+ का। चक्रीय फोटो-फॉस्फोरीलेशन तभी होता है जब उत्तेजना के लिए प्रकाश का तरंगदैर्ध्य 680nm से अधिक हो।

13.6.3 रसोपरासरणी परिकल्पना (केमिओस्मोटिक हाइपोथेसिस)

आइए, अब हम यह समझने का प्रयत्न करें कि क्लोरोप्लास्ट में एटीपी कैसे संश्लेषित होता है? इस प्रक्रम का वर्णन रसोपरासरणी परिकल्पना द्वारा कर सकते हैं। श्वसन की भाँति ही प्रकाश-संश्लेषण में भी, एटीपी का संश्लेषण एक झिल्लिका के आर-पार प्रोटोन प्रवणता के कारण होता है। यहाँ पर ये झिल्लिकाएं थाइलेकोइड की होती हैं। यहाँ पर एक अंतर यह है कि प्रोटोन झिल्लिका के अंदर की ओर अर्थात् अवकोशिका (ल्यूमेन) में संचित होता है। श्वसन में प्रोटोन माइटोकांड्रिया की अंतरा झिल्ली अवकोशिका में संचित होती है, जब इलेक्टॉन इटीएस (अध्याय 14) से गुजरते हैं।

आइए, यह समझें कि किन कारणों से प्रोटोन प्रवणता झिल्लिका के आर-पार होती है? हमें पुनः उन प्रक्रियाओं पर ध्यान देना होगा जो इलेक्ट्रॉन के सक्रियता और उनके परिवहन के समय संपन्न होता है, ताकि उन चरणों को सुनिश्चित किया जा सके जिनके कारण प्रोटोन प्रवणता का विकास होता (चित्र 13.7) है।

(अ) चूँकि जल के अणु का विघटन झिल्लिका के अंदर की तरफ होता है अतः जल के विघटन से उत्पन्न हाइड्रोजन आयन अथवा प्रोटोन थाइलाकोइड अवकाशिका (ल्यूमेन) में संचित होते हैं।

(ब) जैसे ही इलेक्ट्रॉन्स फोटोसिस्टम के माध्यम से गति करते हैं, प्रोटोन झिल्लिका के पार चला जाता है। ऐसा इसलिए होता है, क्योंकि इलेक्ट्रॉन का प्राथमिक ग्राही, जो कि झिल्लिका के बाहर की ओर स्थित होता है, यह अपने इलेक्ट्रॉन को एक इलेक्ट्रॉन वाहक को स्थानांतरित नहीं करता, बल्कि एक हाइड्रोजन वाहक को करता है। अतः इलेक्ट्रॉन प्रवाह के समय यह अणु स्ट्रोमा से एक प्रोटोन को ले लेता है, जब यह अणु अपने इलेक्ट्रॉन को झिल्ली के भीतरी ओर स्थित इलेक्ट्रॉन वाहक को देता है, तब प्रोटोन के अंदर ओर अथवा झिल्ली की अवकाशिका की ओर मुक्त होता है।

(स) एनएडीपी रिडक्टेस एंजाइम झिल्ली के स्ट्रोमा की ओर होता है। पीएस I के इलेक्ट्रॉन ग्राही से आने वाले इलेक्ट्रॉन्स के साथ-साथ प्रोटोन एनएडीपी$^+$ को एनएडीपी एच + एच$^+$ में अपचयित करने के लिए आवश्यक होता है। ये प्रोटोन स्टोमा पीठिका से ही आते हैं।

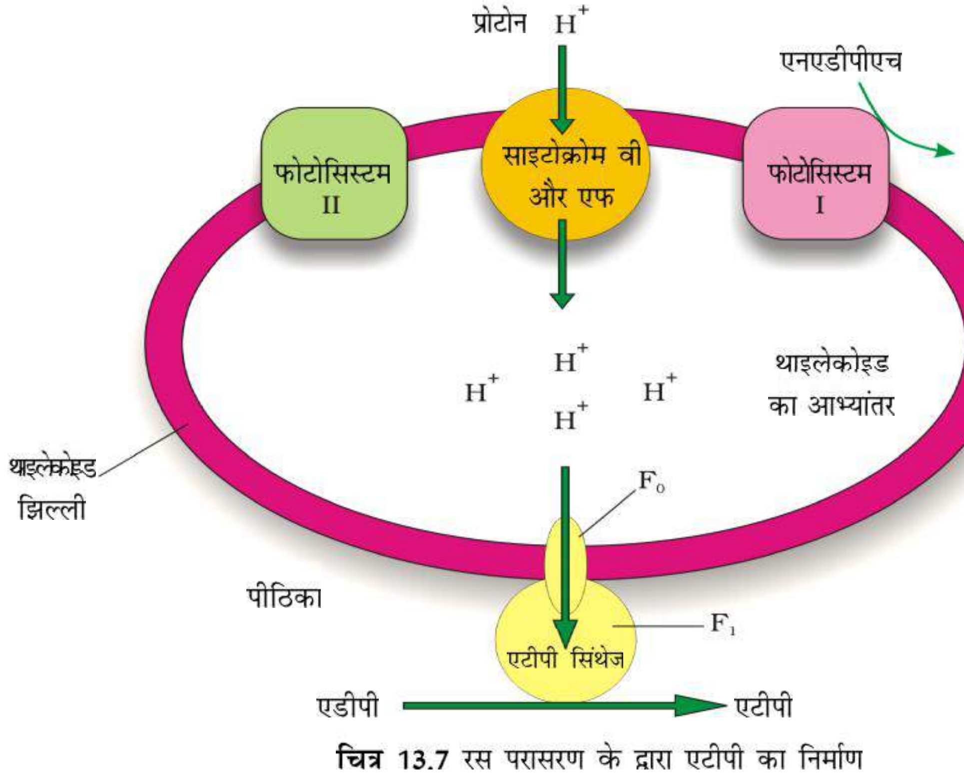

चित्र 13.7 रस परासरण के द्वारा एटीपी का निर्माण

अतः क्लोरोप्लास्ट में स्थित स्ट्रोमा में प्रोटोन की संख्या घटती है, जबकि ल्यूमेन (अवकाशिका) में प्रोटोन का संचयन होता है। इस प्रकार यह थाइलाकोइड झिल्ली के आर-पार एक प्रोटोन प्रवणता उत्पन्न होती है और साथ ही साथ ल्यमेन में पी एच (pH) भी कम हो जाता है।

हमारे लिए प्रोटोन प्रवणता इतना महत्वपूर्ण क्यों है? प्रोटोन प्रवणता इसलिए महत्वपूर्ण है; चूँकि प्रवणता टूटने पर ऊर्जा मुक्त होती है। यह प्रवणता इसलिए *भंग होती है;* क्योंकि प्रोटोन झिल्लिका में मौजूद एटीपीएज के पारगमन वाहिका (F_0) के माध्यम से स्ट्रोमा में गतिशील होता है। आपने अध्याय 12 में एटीपी तथा एटीपीएज एंजाइम के बारे में पढ़ा है। आपको याद होगा कि एटीपीएज एंजाइम में दो भाग होते हैं: इसमें एक एफ शॅन्य(F_0) कहलाता है, जो झिल्लिका में अतः स्थापित होता है तथा एक पारगमन झिल्लिका चैनल की रचना करता है जो कि झिल्लिका के आर-पार प्रोटोन के विसरण को आगे बढ़ाता है। इसका दूसरा भाग एफ वन (F_1) कहलाता है और थाइलेकोइड की बाहरी सतह जो स्ट्रोमा की ओर होती है पर उद्धर्व के रूप में होता है प्रवणता का भंजन पर्याप्त ऊर्जा प्रदान करता है, जिसके कारण एटीपीएज के कण एफ वन (F_1) में संरूपण परिवर्तन आता है। जिससे कि एंजाइम ऊर्जा से प्रचूर एटीपी का संश्लेषण कर सकें।

रसोपरासरण (केमिओस्मोसिस) के लिए एक झिल्लिका, एक प्रोटोन पंप, एक प्रोटोन प्रवणता तथा एटीपीएज की आवश्यकता होती है। प्रोटोन को एक झिल्लिका के आर-पार पंप करने के लिए ऊर्जा का उपयोग होता है, ताकि थाइलेकोइड ल्यूमेन में एक प्रवणता अथवा प्रोटोन की उच्च सांद्रता पैदा हो सके। एटीपीएज के पास एक चैनल अथवा नलिका होता है, जो झिल्लिका के आर-पार प्रोटोन को विसरण का अवसर देता है। यह एटीपीएज एंजाइम को सक्रिय करने के लिए पर्याप्त ऊर्जा छोडता है जो एटीपी संश्लेषण को उत्प्रेरित करता है।

इलेक्ट्रॉन की गतिशीलता से उत्पादित एनएडीपीएच के साथ एटीपी भी स्टोमा (पीठिका) में संपन्न होने वाले जैव संश्लेषण में तुरंत उपयोग कर लिए जाएंगे. जो CO_2 के स्थिरण एवं शर्करा के संश्लेषण के लिए आवश्यक है।

13.7 एटीपी तथा एनएडीपीएच कहाँ उपयोग होते हैं?

हमने पढ़ा है कि प्रकाश अभिक्रिया के उत्पाद एटीपी, एनएडीपीएच तथा O_2 हैं। इनमें से O_2 क्लोराप्लास्ट के बाहर विसरित होती है; जबकि एटीपी तथा एनएडीपीएच का उपयोग आहार अथवा शर्करा को संश्लेषित करने वाली प्रक्रिया में होता है। यह प्रकाश-संश्लेषण का **जैव संश्लेषण चरण** होता है। यह प्रक्रिया परोक्ष रूप से प्रकाश पर निर्भर नहीं होती; बल्कि यह प्रकाश के *प्रक्रियाओं* के *उत्पादों अर्थात्* एटीपी *तथा* एनएडीपीएच के *अतिरिक्त* CO_2 तथा H_2O (जल) पर निर्भर होती है। आप शायद यह आश्चर्य कर सकते हैं कि इसकी सत्यता की जाँच कैसे की जा सकती है? यह बहुत ही सरल है। प्रकाश उपलब्ध न होने के तुरंत बाद कुछ समय तक के लिए जैव संश्लेषण प्रक्रिया जारी रहती है और इसके बाद बंद हो जाती है। यदि इसके बाद पनः प्रकाश उपलब्ध होता है तो संश्लेषण पनः आरंभ हो जाता है।

अतः जैव संश्लेषण चरण को ***अप्रकाशी अभिक्रिया*** *(डार्क रिएक्शन) कहना क्या एक मिथ्या है? अपने साथियों के बीच इसकी चर्चा करें.*

आइए अब देखें कि जैव संश्लेषण चरण में एटीपी तथा एनएडीपीएच का उपयोग कैसे होता है? हम पहले देख चुकें हैं कि H_2O के साथ CO_2 के मिलने से $(CH_2O)_n$ अथवा शर्करा उत्पादित होती है। यह वैज्ञानिकों की रुचि थी कि उन्होंने यह खोजा कि यह प्रतिक्रिया कैसे संपन्न होती है अथवा यह जाना कि CO_2 के प्रतिक्रिया में आने से अथवा यौगिकीकृत होने से कौन सा पहला उत्पाद बनता है। द्वितीय विश्व युद्ध के ठीक बाद, लाभदायी उपयोग हेतु रेडियो आइसोटोपिक का उपयोग किया गया। इस उपयोग में मेलविन केल्विन का कार्य सराहनीय था। उन्होंने शैवाल में रेडियो एक्टिव 14_C का उपयोग प्रकाश-संश्लेषण अध्ययन में किया, जिससे पता लगा कि CO_2 यौगिकीकरण (फिक्सेशन) पहला उत्पाद एक 3 कार्बन वाला कार्बनिक अम्ल था। इसके साथ ही उसने संपूर्ण जैव संश्लेषण पथ की खोज की अतः इसे **केल्विन चक्र** कहते हैं। इस पहले उत्पाद का नाम 3-**फोस्फोग्लिसेरिक** अम्ल अथवा संक्षेप में **पीजीए** है। *इसमें कितने कार्बन परमाणु होते हैं?*

वैज्ञानिकों ने जानने का यह भी प्रयत्न किया कि क्या सभी पौधे CO_2 यौगिकीकरण (स्थिरीकरण) के बाद पहला उत्पाद पीजीए ही बनाते हैं अथवा फिर अन्य पौधों में कोई अन्य उत्पाद हैं। बहुत सारे पौधों में व्यापक शोध किए गए, जहाँ पर CO_2 के यौगिकीकरण का पहला स्थायी उत्पाद पुनः एक कार्बनिक अम्ल था, जिसमें कार्बन के चार परमाणु थे। यह अम्ल **ओक्सैलोएसिटिक अम्ल** अथवा ओएए था। तब से प्रकाश-संश्लेषण के दौरान CO_2 के स्वांगीकरण (एसिमिलेशन) को दो मुख्य विधियों से बताया गया। जिन पौधों में, CO_2 यौगिकीकरण का पहला उत्पाद C_3 अम्ल (PGA) था उसे **C_3 पथ** और जिनका पहला उत्पाद C_4 अम्ल (ओएए) था, उसे **C_4 पथ** कहते हैं। इन दोनों समूह के पौधों में कुछ अन्य अभिलक्षण भी होते हैं, जिनकी चर्चा हम बाद में करेंगे।

13.7.1 CO_2 के प्राथमिकग्राही

आइए, अब हम अपने आप से एक प्रश्न पूछें, जिसे कि उन वैज्ञानिकों द्वारा पूछा गया था जो अप्रकाशी अभिक्रिया को समझने के लिए संघर्ष कर रहे थे। *उस अणु में कितने कार्बन परमाणु हैं जो CO_2 को ग्राह्य करने के बाद तीन कार्बन यौगिक (अर्थात पीजीए) बनाते हैं?*

अध्ययनों से पता लगा कि ग्राही अणु एक पाँच कार्बन वाला कीटोज शुगर (शर्करा) था, यह रिब्यूलोज 1-5 बिसफोस्फेट (RuBP) था। *क्या आपमें से किसी ने इस संभावना के बारे में सोचा था?* परेशान मत होइए; वैज्ञानिकों को भी इसे जानने में बहुत समय लगा और किसी निष्कर्ष पर पहुँचने से पहले बहुत सारे प्रयोग किए गए थे। उन्हें यह भी यकीन था कि, चूँकि पहला उत्पाद C_3 अम्ल था, अतः प्राथमिकग्राही 2 कार्बन कंपाउंड (यौगिक) होगा। उन्होंने पहले 2 कार्बन कम्पाउंड को पहचानने के लिए कई वर्ष तक प्रयत्न किए। अंततः उन्होंने पाँच कार्बन वाले RuBP की खोज करने में सफलता प्राप्त की।

13.7.2 केल्विन चक्र

केल्विन तथा उसके सहकर्मियों ने संपूर्ण पथ का पता *लगाया* और *बताया* कि *यह* पथ एक चक्रीय क्रम में संचालित होता है; जिसमें RuBP पुनः उत्पादित होता है। आइए, अब यह देखें कि केल्विन पथ कैसे संचालित होता है और शर्करा कहाँ पर संश्लेषित होती है। आइए, शुरू में ही हम स्पष्ट रूप से समझ लें कि केल्विन चक्र उन सभी पौधों में होता है जो प्रकाश-संश्लेषण करते हैं। इससे कोई फर्क नहीं पडता कि उनमें चाहे पथ C_3 अथवा C_4 (अथवा कोई अन्य) हो (चित्र 13.8)।

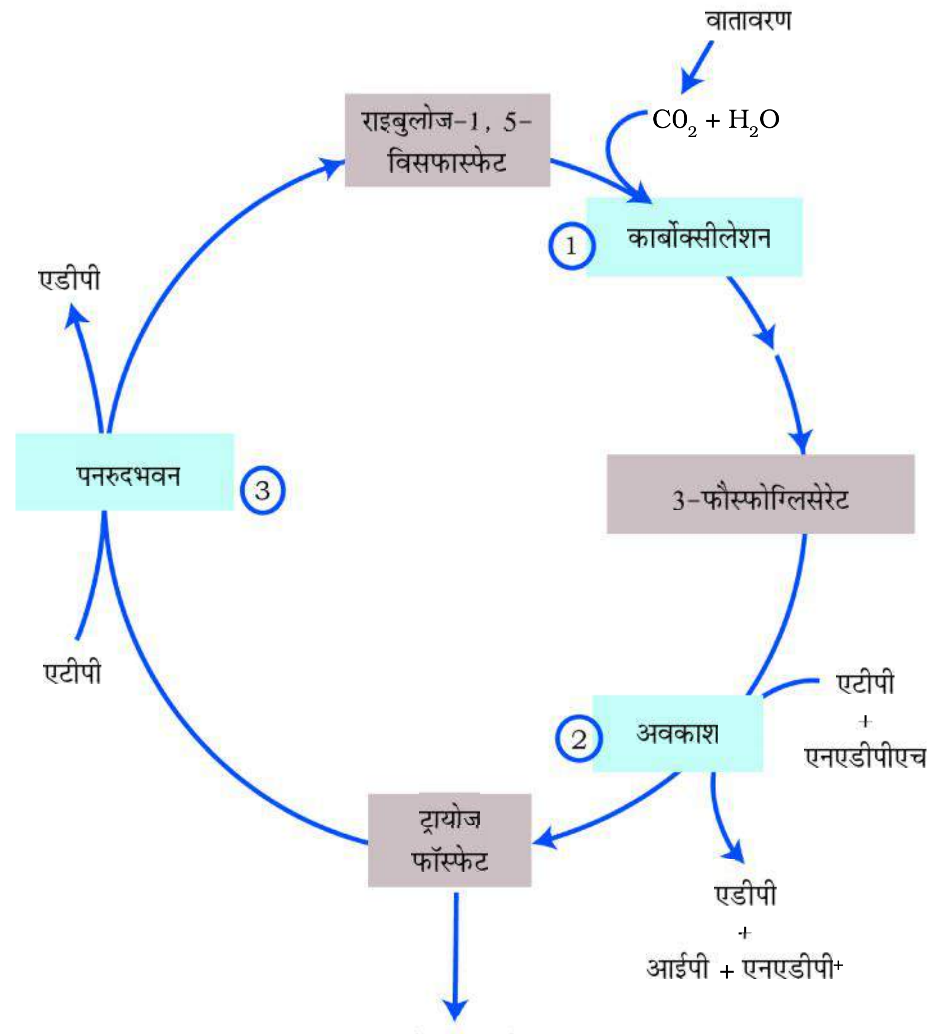

चित्र 13.8 कैल्विन चक्र तीन भागों में बांटा जा सकता है। (1)कार्बोक्सिलेशन जिसमें CO_2 राइबुलोज-1, 5 विसफांस्फेट से योग करता है (2) अवकरण, जिसमें कार्बोहाइड्रेट का *निर्गाण* प्रकाश रासायनिक ग्राही तथा एनएडीपीएच की मदद से होता है तथा (3) पुनरुद्भवन जिसमें CO_2 ग्राही राइबलोज-1. 5 विसफॉस्फेट का फिर से निर्माण होता है तथा चक्र चलता रहता है।

केल्विन चक्र को आसानी से समझने के लिए इसको तीन चरणों – कार्बोक्सिलीकरण (कार्बोक्सीलेशन), रिडक्शन तथा रिजनरेशन में वर्णन करते हैं।

1. **कार्बोक्सिलीकरण**– CO_2 के यौगिकीकरण से एक स्थिर कार्बनिक मध्यस्थ बनता है। केल्विन चक्र में कार्बोक्सिलीकरण एक अत्यधिक निर्णायक चरण है जहाँ RuBP के कार्बोक्सिलीकरण के लिए CO_2 का उपयोग किया जाता है। यह प्रतिक्रिया एंजाइम RuBP कार्बोक्सिलेस के द्वारा उत्प्रेरित होती है, जिसके परिणामस्वरूप 3-P GA के दो अणु बनते हैं। चूँकि इस एंजाइम में एक ऑक्सीजिनेशन (ऑक्सीकरण) क्षमता भी होती है, अतः यह ज्यादा उचित होगा कि हम इस एंजाइम को RuBP कार्बोक्सीलेस-ऑक्सीजिनेस अथवा **रुबिस्को** कहें।
2. **रिडक्शन (अपचयन)** यह प्रतिक्रियाओं की एक शृंखला है जिसमें ग्लूकोज बनता है। इस चरण में प्रत्येक CO_2 अणु के स्थिरण हेतु एटीपी के 2 अणुओं का उपयोग फॉस्फोरिलेशन के लिए तथा एनएडीपीएच के दो अणुओं का उपयोग अपचयन हेतु होता है। **पथ** से ग्लूकोज के एक अणु को बनाने के लिए CO_2 के 6 अणओं के यौगिकीकरण तथा चक्करों की आवश्यकता होती है।
3. **रिजेनरेशन (पुनरूदभवन)** यदि चक्र को बिना बाधा के जारी रहना है तो CO_2 ग्राही अणु RuBP का पुनरुद्भवन बहुत ही आवश्यक होता है। पुनरुद्भवन के चरण में RuBP गठन हेत फॉस्फोरीलेशन के लिए एक एटीपी की आवश्यकता होती है।

इसलिए, केल्विन चक्र में CO_2 के प्रत्येक अणु को प्रवेश के लिए एटीपी के 3 अणु तथा एनएडीपीएच के 2 अणुओं की आवश्यकता होती है। अप्रकाश अभिक्रिया में उपयोग होने वाले एटीपी और एनएडीपीएच की संख्याओं में यह अंतर ही चक्रीय फॉस्फोरीलेशन को संपन्न कराने का कारण है।

ग्लूकोस के एक अणु की रचना के लिए इस चक्र के 6 चक्करों की आवश्यकता होती है। *यह पता करें कि केल्विन पथ के माध्यम से ग्लूकोस के एक अणु की रचना के लिए कितने एटीपी तथा एनएडीपीएच के अणुओं की आवश्यकता होती है।* आपको यह बात शायद समझने में मदद करेगी कि केल्विन चक्र में क्या अंदर जाता है और क्या बाहर निकलता है।

अंदर	बाहर
6 CO_2 18 एटीपी 12 एनएडीपीएच	एक ग्लूकोज 18 एडीपी 12 एनएडीपी

13.8 पथ C_4

C_4 पथ जैसा कि पहले बताया गया है कि पौधे जो शुष्क उष्णकटिबंधी क्षेत्र में पाए जाते हैं उनमें C_4 पथ होता है। इन पौधों में CO_2 को यौगिकीकरण का पहला उत्पाद यद्यपि C_4 औक्जेलोएसिटिक अम्ल होता है फिर भी इनके मख्य जैव संश्लेषण पथ में C_3 पथ

अथवा केल्विन चक्र ही होता है। तब फिर से C_3 पौधों से किस प्रकार में भिन्न हैं? यह एक प्रश्न है जिसे आप पूछ सकते हैं।

C_4 पौधे विशिष्ट हैं: इनकी पत्तियों में एक विशेष प्रकार की शारीरिकी होती है। ये उच्च ताप को सह सकते हैं। ये उच्च प्रकाश तीव्रता के प्रति अनुक्रिया करते हैं। उनमें प्रकाश श्वसन प्रक्रिया नहीं होती और उनमें जैव भार अधिक उत्पन्न होता है। आइए. इन्हें एक-एक करके समझें।

आओ, C_3 तथा C_4 पत्तियों की खड़ी काट का अध्ययन करें। *क्या आपने इन दोनों में कोई अंतर देखा है? क्या दोनों में एक ही प्रकार के पर्णमध्योतक हैं? क्या इनके संवहनी पूलाच्छद के आस-पास एक ही प्रकार की कोशिकाएं हैं?*

C_4 पथ पौधों की संवहन बंडल के चारों ओर स्थित बृहद् **कोशिकाएं पूलाच्छद** (बंडल शीथ) कोशिकाएं कहलाती है और पत्तियाँ जिनमें ऐसी शारीर होती है, उन्हें **क्रैंजी शारीर** वाली पत्तियाँ कहते हैं। यहाँ, क्रैंज का अर्थ है छल्ला अथवा घेरा, चूँकि कोशिकाओं की व्यवस्था एक छल्ले के रूप में होती है। संवहन बंडल के आस-पास पूलाच्छद कोशिकाओं की **अनेकों परतें** होती हैं, इनमें बहत अधिक संख्या में क्लोरोप्लास्ट होते हैं. इसकी मोटी भित्तियाँ गैस से अप्रवेश्य होती हैं और इनमें अंतरकोशीय स्थान नहीं होता। आप C_4 पौधों जैसे मक्का अथवा ज्वार की पत्तियों का एक भाग काटो, ताकि क्रैंज शारीर एवं पर्णमध्योतक देख सकें।

अपने आस-पास के विभिन्न स्पेशीज के पेड़ों की पत्तियाँ एकत्र करें और उनकी पत्तियों की खड़ी काट लें। सूक्ष्मदर्शी से इसके संवहन बंडल पूल के आस-पास पूलाच्छद को देखें। पूलाच्छद की उपस्थिति C_4 पौधों को पहचानने में आपकी सहायता करेगा।

अब चित्र 13.9 में दिखाए गए पथ का अध्ययन करें। इस पथ को हैच एवं स्लैल पथ कहते हैं। यह भी एक चक्रीय प्रक्रिया है। आइए, हम चरणों को समझते हुए पथ का अध्ययन करें।

CO_2 का प्राथमिक ग्राही एक 3 कार्बन अणु **फोस्फोइनोल पाइरुवेट (PEP)** है और वह पर्णमध्योतक कोशिका में स्थित होता है। इस यौगिकीकरण को **पेप कार्बोक्सीलेस** अथवा पेप केस (PEP) नामक एंजाइम संपन्न करता है। पर्णमध्योतक कोशिकाओं में रुबिस्को एंजाइम नहीं होता है। C_4 अम्ल ओएए पर्णमध्योतक कोशिका में निर्मित होता है।

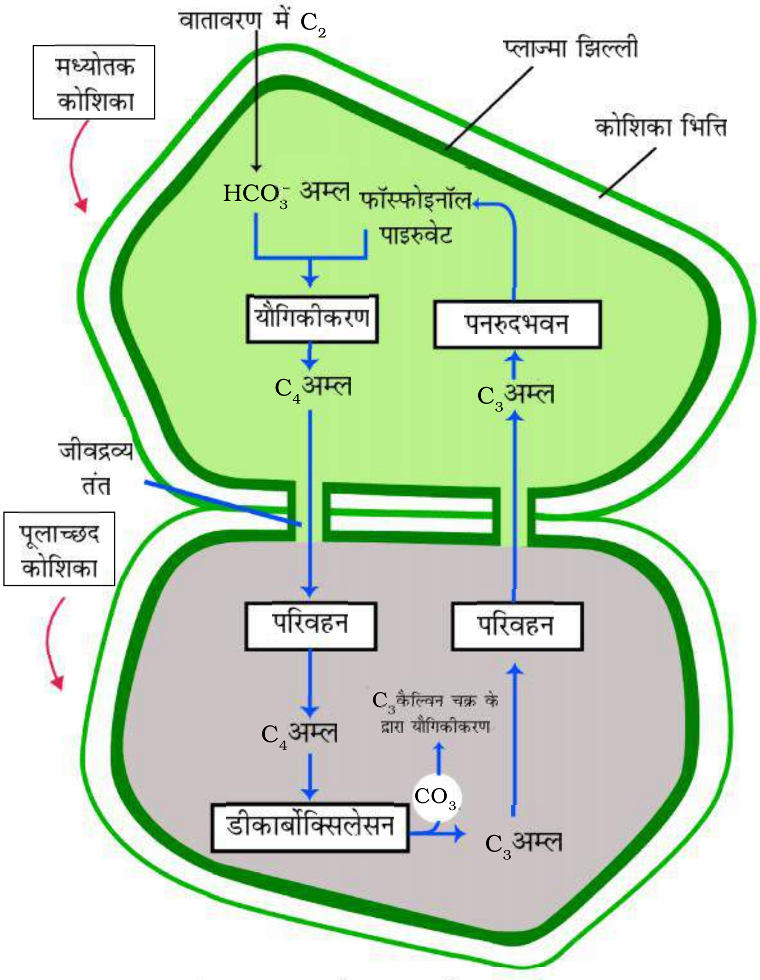

चित्र 13.9 हैच एवं स्लैक पाथवे

इसके बाद ये पर्णमध्योतक कोशिका में अन्य 4-कार्बन वाले अम्ल जैसे मैलिक अम्ल और एस्पार्टिक अम्ल बनते हैं, जोकि पूलाच्छद कोशिका में चले जाते हैं। पूलाच्छद कोशिका में यह C_4 अम्ल विघटित हो जाता है जिससे CO_2 तथा एक 3-कार्बन अणु मुक्त होते हैं।

3-कार्बन अणु पुनः पर्णमध्योतक में वापस आ जाता है, जहाँ यह पुनः पेप में बदला जाता है और इस तरह से यह चक्र पूरा होता है।

पूलाच्छद कोशिका से निकली CO_2 केल्विन पथ अथवा C_3 में प्रवेश करती है केल्विन एक ऐसा पथ जो सभी पौधों में समान रूप से होता है। पूलाच्छद कोशिका रुबिस्को से भरपूर होती है, परंतु पेप केस से रहित होती है। अतः मैलिक पथ केल्विन पथ जिसके परिणामस्वरूप शर्करा बनती है, वह C_3 एवं C_4 पौधों में सामान्य रूप से होता है।

क्या आपने ध्यान दिया है कि केल्विन पथ सभी C_3 पौधों की पर्णमध्योतक कोशिकाओं में पाया जाता है? C_4 पौधों में पर्णमध्योतक कोशिकाओं में यह संपन्न नहीं होता है, किंतु पूलाच्छद कोशिकाओं में केवल कारगर होता है।

13.9 प्रकाश श्वसन (फोटोरेस्पिरेशन)

आइए, हम एक और प्रक्रिया- प्रकाश श्वसन को जानने का प्रयत्न करते हैं, जो C_3 एवं C_4 पौधों में महत्वपूर्ण अंतर करती है। **प्रकाश श्वसन** समझने के लिए, हमें केल्विन पथ के प्रथम चरण अर्थात् CO_2 स्थिरीकरण के पहले चरण के विषय में कुछ अधिक जानकारी करनी होगी। यह वह अभिक्रिया है जहाँ RuBP कार्बन डाईऑक्साइड से संयोजित कर 3 पीजीए के 2 अणुओं का गठन करता है और एक एंजाइम रिब्लोज विसफोस्फेट कार्बोक्सीलेस ऑक्सीजिनेस (RuBisCO) के द्वारा उत्प्रेरित होता है।

$$RuBP + CO_2 \xrightarrow{\text{#fcLdk}} 2x3PGA$$

#fcLdk uked ,tkbe fo'o e lcl T;knk çpj g (vkidk vk'p; gkrk g D;k\) vkj bldk ;g x.k g fd bldh lfØ; txg CO_2 ,o O_2 nkuk l. cfèkr ok ldrk gA blfy, bl #fcLdk dgr gA *क्या आप सोच सकते हैं कि यह कैसे संभव है?* #fcLdk e O_2 dh vi{kk CO_2 oQ fy, vf/d c/rk gA dYiuk dhft, fd ;fn ,lk ugh gkrk rk D;k gkrk! ;g vkc/rk ifr;kfxrkRed gA O_2 vFkok CO_2 bue l dku vkc/ gkxk] ;g mudh lki{k lknrk ij fuHkj djrk gA

C_3 ik/k e oQN O_2 #fcLdk l cf/r gkrh g vr% CO_2 dk ;kfxdhdj.k de gk tkrk gA ;gk ij vkj;chih 3&PGA oQ v.kvk e ifrofrr gku dh ctk; vkDlhtu l l;kftr gkdj pØ e ,d iQkLiQkfXyljV v.k rFkk iQkLiQkXykbdkyV dk ,d v.k cukr g ftl idk'k 'olu dgr gA idk'k 'olu iFk e 'koQjk vkj ,Vhih dk l'y"k.k ugh gkrk_ cfYd ble ,Vhih oQ mi;kx oQ lkFk CO_2 Hkh fudyrh gA idk'k 'olu iFk e ,Vhih vFkok ,u,Mhih,p dk l'y"k.k ugh gkrkA vr% idk'k 'olu ,d fujFkd ifØ;k gA

तालिका 13.1 C_3 एवं C_4 पौधों के बीच अंतर करने के लिए इस तालिका के कालम 2 और 3 को भरो।

विशिष्टताएं	C_3 पौधे	C_4 पौधे	इनमें से चुनिए
og dkf'kdk idkj ftle o{fYou pØ l iUu gkrk g			i.keè;krd@iykPNn@nkuk
og dkf'kdk idkj ftle ikjfHkd dkcksfDly'ku çfrfØ;k ?kfVr gkrk gA			i.keè;krd@iykPNn@nkuk
,d iÙkh e fdru çdkj dh dkf'kdk, gkrh g tk CO_2 dk ;kfxdhdj.k djrh gA			,d% i.keè;krd] nk% iykPNn ,o i.keè;krd rhu% iykPNn] ifylM ([kHk)] Lith i.keè;krd
CO_2 dk çkFkfed xkgh dku lk g\			vkj;chih@ihbih@ihth,
çkFkfed CO_2 xkgh e fdruh l[;k e dkcu gkr g\			5@4@3
CO_2 fLFkjhdj.k dk ikFkfed mRikn dku lk g\			ihth,@vk,,@vkj;chih
CO_2 fLFkjhdj.k o{ ikFkfed mRikn e fdru dkcu g\			3@4@5
D;k ik/ e #fcLdk (RuBisCO) gkrk g\			gk@ugh@lno ugh
D;k ik/ e iio{l (PEPCase) gkrk g\			gk@ugh@lno ugh
ik/ e fdu dkf'kdkvk e #fcLdk (Rubisco) gkrk g\			i.keè;krd@iykPNn dkb ugh
mPp idk'k fLFkfr e CO_2 o{ ;kfxdhdj.k dh nj			fuEu@mPp@eè;e
D;k fuEu idk'k rhork e idk'k 'olu gkrk g\			mPp@ux.;@dHkh&dHkh
D;k mPp idk'k rhork e idk'k 'olu gkrk g\			mPp@ux.;@dHkh&dHkh
D;k fuEu CO_2 lknrk e idk'k 'olu gkxk\			mPp@ux.;@dHkh&dHkh
D;k mPp CO_2 lknrk e idk'k 'olu gkxk\			mPp@ux.;@dHkh&dHkh
vudyre rkieku			30&40°C @20&25°C 40°C l Åij
mnkgj.k			fofHkUu ik/k dh ifÙk;k o{ [kM lDlu dkV rFkk l{en'kh o{ uhp j[kdj o{t 'kjhj n[k rFkk mUg mi;Dr [kku (dkye) e HkjA

C_4 ik/ e idk'k 'olu ugh gkrk gA bldk dkj.k ;g g fd bue ,d ,lh i.kkyh gkrh g tk ,tkbe LFky ij CO_2 dh lknrk c<k nrh gA ,lk rc gkrk g tc i.keè;krd dk C_4 vEy iykPNn e VVdj CO_2 dk eDr djrk g] ftlo\ ifj.kkeLo:i CO_2 dh vrjdkf'kdh; lknrk c< tkrh gA bll ;g lfuf'pr gk tkrk g fd #fcLdk dkckDlhyl oQ :i e dk; djrk g] ftll bldh vkDlhftul oQ :i e dk; dju dh {kerk de gk tkrh gA

vc] vki tkur g fd C_4 ik/k e idk'k 'olu ugh gkrkA vc lHkor% vki le> x, gkx fd bu ik/k e mRikndrk ,o mRiknu D;k vPNk gkrk gA blo\ vfrfjDr ; ik/ mPp rki dk Hkh lgu dj ldr gA

mi;Dr ifjppk oQ vk/kj ij D;k vki mu ik/k dh ryuk dj ldr gk ftle C_3 rFkk C_4 iFk gkrk gA vki nh xb rkfydk dk mi;kx dj vko';d lpukvk dk HkjA

13.10 प्रकाश-संश्लेषण को प्रभावित करने वाले कारक

idk'k&l'y"k.k dk iHkkfor dju oky dkjdk oQ fo"k; e tkuuk vko';d gA idk'k&l'y"k.k dh nj ik/k ,o iQlyh iknik oQ mRiknu tkuu e vR;r gh egRoi.k gA idk'k&l'y"k.k db dkjdk l iHkkfor gkrk g tk cká rFkk vkrfjd nkuk gh gk ldr gA ikni dkjdk e l[;k] vkÑfr] vk; rFkk ifÙk;k dk foU;kl] i.keè;krd dkf'kdk, rFkk DykjkslykLV vkrfjd CO_2 dh lknrk vkj DykjksfiQy dh ek=kk vkfn gA ikni vFkok vkrfjd dkjd ik/ dh of¼ rFkk vkuof'kd iokudyrk ij fuHkj djr gA

cká dkjd g l; dk idk'k] rki] CO_2 dh lknrk rFkk tyA ikni dh idk'k&l'y"k.k ifØ;k e ; lHkh dkjd ,d le; e lkFk&lkFk gh iHkko Mkyr gA ;|fi] cgr lkj dkjd ijLij fØ;k djr g rFkk lkFk&lkFk idk'k&l'y"k.k vFkok CO_2 oQ ;kfxdhdj.k dk iHkkfor djr g] fiQj Hkh ik;% bue l dkb Hkh ,d dkjd bl dh nj dk iHkkfor vFkok lhfer dju dk e[; dkj.k cu tkrk gA vr% fdlh Hkh le; ij mikudyre Lrj ij miyC/ dkjd }kjk idk'k&l'y"k.k dh nj dk fu/kj.k gkxkA

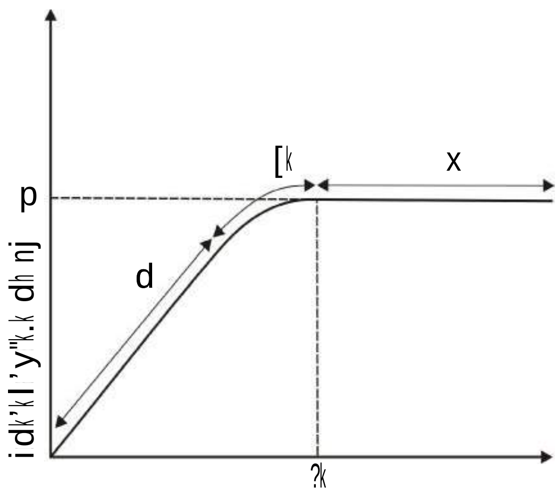

चित्र 13.10 idk'k dh rhork dk idk'kl'y"k.k oQ ifr nj ij iHkko dk xkiQ

tc vud dkjd fdlh (to) jklk;fud ifØ;k dk iHkkfor djr g rk Cydeu dk (1905) **लॉ ऑफ लिमिटिंग फैक्टर्स** iHkko e vkrk gA इसके अनुसार: *यदि कोई रासायनिक प्रक्रिया एक से अधिक कारकों द्वारा प्रभावित होती है तो इसकी दर का निर्धारण उस समीपस्थ कारक द्वारा होगा जो कि न्यूनतम मान (मूल्य) वाला हो।*

अगर उस कारक की मात्रा बदल दी जाए तो कारक प्रक्रिया को सीधे प्रभावित करता है।

mnkgj.k oQ fy, ,d gjh iÙkh] vf/dre vuoQy idk'k rFkk CO_2 dh mifLFkfr oQ ckotn] ;fn rki cgr de gk rk idk'k&l'y"k.k ugh djxhA bl iÙkh e idk'k&l'y"k.k rHkh 'k# gkxk] ;fn mlI b"Vre rki inku fd;k tk,A

13.10.1 प्रकाश

tc ge idk'k dk idk'k&l'y"k.k dk iHkkfor dju oky dkjd oQ :i e yr g rk ge idk'k dh x.koÙkk] idk'k dh rhork rFkk nhfIrdky oQ chp vrj dju dh vko';drk gA ;gk de idk'k rhork ij vkifrr idk'k rFkk CO_2 oQ ;kfxdhj.k dh nj oQ chp ,d j[kh; lc/ gA mPp idk'k rhork gku ij] bl nj e dkb of¼ ugh gkrh g] vU; dkjd lhfer gk tkr g (fp=k 13-10)A ble è;ku nu okyh jkpd ckr ;g g fd idk'k lrflr i.k idk'k oQ 10 ifr'kr ij gkrh gA Nk;k vFkok l?ku txyk e mxu oky ik/k dk NkMdj idk'k 'kk;n gh iÑfr e lhekdkjh dkjd gkA ,d lhek oQ ckn vkifrr idk'k DykjkfiQy oQ fo?kVu dk dkj.k gkrh g] ftlI idk'k&l'y"k.k dh nj de gk tkrh gA

13.10.2 कार्बन डाइऑक्साइड की सांद्रता

idk'kl'y"k.k e dkcu MkbvkDlkbM ,d ie[k lhekdkjh dkjd gA ok;eMy e CO_2 dh lknrk cgr gh de g (0-03 vkj 0-04 ifr'kr oQ chp)A CO_2 dh lknrk e 0-05 ifr'kr rd of¼ oQ dkj.k CO_2 dh ;kfxdhdj.k nj e of¼ gk ldrh g] yfdu bll vf/d dh ek=kk yc le; rd oQ fy, {kfrdkjd cu ldrk gA

C_3 ,o C_4 ik/ CO_2 dh lknrk e fHkUu vufØ;k djr gA fuEu idk'k fLFkfr;k e nkuk e l dkb Hkh leg mPp CO_2 lknrk oQ ifr vufØ;k ugh djr gA mPp idk'k rhork e C_3 rFkk C_4 nkuk gh rjg oQ ikni e idk'k&l'y"k.k dh c<h nj vf/d gk tkrh gA ;gk ij ;g è;ku nuk egRoi.k g fd C_4 ik/ yxHkx 360 μlL^{-1} ij lrlr gk tkr g tcfd C_3 c<h gb CO_2 lknrk ij vufØ;k djrk g rFkk lrlru oQoy 450 μlL^{-1} oQ ckn gh fn[kkrh gA vr% miyC/ CO_2 dk Lrj C_3 iknik oQ fy, lhekdkjh gA

lp ;g g fd C_3 ik/ mPprj CO_2 lknrk e vufØ;k djr g vkj bll idk'k&l'y"k.k dh nj e of¼ gkrh g] ftloQ iQyLo:i mRiknu vf/d gkrk g vkj fl¼kr dk mi;kx xhu gkml iQlyk] tl VekVj ,o cy fep e fd;k x;k gA bUg dkcu&MkbvkDlkbM l Hkjij okrkoj.k e c<u dk volj fn;k tkrk g rkfd mPp inkokj iklr gkA

13.10.3 ताप

vidk'kh vfHkfØ;k ,tkbe ij fuHkj djrh g] blfy, rki }kjk fu;f=kr gkrh gA ;|fi idk'k vfHkfØ;k Hkh rki lonh gkrh g] yfdu ml ij rki dk dkiQh de

iHkko gkrk gA C_4 ik/ mPp rki ij vufØ;k djr g rFkk mue idk'k&l'y"k.k dh nj Hkh Åaph gkrh g] tcfd C_3 ik/ oQ fy, b"Vre rki de gkrk gA
fofHkUu ik/k oQ idk'k&l'y"k.k fy, b"Vre rki muoQ vuoQfyr vkokl ij fuHkj djrk gA m".kdfVc/h ik/k oQ fy, b"Vre rki mPp gkrk gA le'khrk".k tyok; e mxu oky ik/k oQ fy, ,d vi{kkÑr de rki dh vko';drk gkrh gA

13.10.4 जल

;|fi idk'k vfHkfØ;k e ty ,d egRoi.k ifrfØ;k vfHkdkjd g] rFkkfi] dkjd oQ :i e ty dk iHkko ij ikni ij iMrk g] u fd lh/ idk'k&l'y"k.k ijA ty ruko j/ dk cn dj nrk g vr% CO_2 dh miyC/rk ?kV tkrh gA blo lkFk gh] ty ruko l ifÙk;k ej>k tkrh g] ftl l iÙkh dk {k=kiQy de gk tkrk g vkj bloQ lkFk gh lkFk mikip;h fØ;k, Hkh de gk tkrh gA

सारांश

ik/ viu Hkktu dk idk'k&l'y"k.k }kjk Lo; r;kj djr gA bl ifØ;k oQ nkjku ok;eMy e miyC/ dkcuMkbvkDlkbM ifÙk;k oQ j/k }kjk yh tkrh g vkj dkckgkbMVl& e[;r% Xydkt ('koQjk) ,o LVkp cuku e mi;kx dh tkrh gA idk'k&l'y"k.k dh fØ;k ik/k oQ gj Hkkxk] e[;r% ifÙk;k e lEiUu gkrh gA ifÙk;k oQ vrxr i.keè;krd dkf'kdkvk e Hkkjh ek=kk e DykjkIykLV gkrk g tkfd CO_2 oQ ;kfxdhdj.k (fiQDl'ku) oQ fy, mÙkjnk;h gkrk gA DykjkIykLV oQ vrxr] idk'k vfHkfØ;k oQ fy, f>fYydk,] og LFky gkrh g] tcfd oQekflFkfVd iFk LVkek e fLFkr gkrk gA idk'k&l'y"k.k e nk pj.k gkr g% idk'k vfHkfØ;k rFkk dkcu fiQfDlx fj,D'ku (dkcu ;kfxdhdj.k vfHkfØ;k)A idk'k vfHkfØ;k e idk'k Åtk ,Vuk e ektn o.kdk }kjk vo'kkf"kr fd, tkr g rFkk vfHkfØ;k oQn e ektn Dykjkfi'y ए oQ v.kvk dk Hkt fn, tkr gA ;gk ij nk iQkVkflLVe (idk'k i.kkyh) ih,l I rFkk ih,l II gkr gA ih,l I oQ vfHkfØ;k oQn e Dykjkfi'y ए ih 700 oQ v.k tk idk'k rjxnè; 700 ,u,e dk vo'kkf"kr djr g] tcfd ih,l II e ,d ih 680 vfHkfØ;k oQn gkrk g tk yky idk'k dk 680 ,u,e ij vo'kkf"kr djrk gA idk'k vo'kk"k.k oQ ckn byDVku mÙkftr gkr g vkj PS II rFkk PS I l LFkkukrfjr gkr g, vr e ,u,Mhih (NADP) e igp ,u,Mhih,p (NADPH) dh jpuk djr gA bl ifØ;k oQ nkjku ,d ikVku io.krk FkkbydkbM dh f>fYydk oQ vkj&ikj ink dh tkrh gA ,Vhih ,tkbe oQ fgLl F_0 l ikVku dh xfr oQ dkj.k io.krk Hkx gk tkrh g rFkk ,Vhih oQ l'y"k.k gr i;klr Åtk eDr dh tkrh gA ikuh oQ v.k dk fo?kVu PS II oQ lkFk tMk gkrk g] ifj.kker% O_2] vkj ikVku dh fjgkb gkrh g vkj PS II e byDVku dk LFkkukrj.k gkrk gA
dkcu ;kfxdhdj.k e] ,tkbe #fcLdk }kjk CO_2 ,d 5 dkcu ;kfxd RuBP l tkMk tkrk g rFkk 3 dkcu ihth, oQ 2 v.k e cnyrk gA bloQ ckn oQfYou pØ }kjk ;g 'koQjk e ifjofrr gkrk g vkj RuBP iu#nHkfor gkrk gA bl ifØ;k oQ nkjku idk'k vfHkfØ;k }kjk l'yf"kr ,Vhih ,o ,u,Mhih ,p bLreky gkrk gA bloQ lkFk gh C_3 ik/k e #fcLdk ,d fujFkd vkDlhftu'ku ifrfØ;k% idk'k 'olu dk mRifjr djrk gA

oQN m".kdfVc/h; ik/ fo'k"k idkj dk idk'k&l'y"k.k djr g ftl C_4 dgr gA bu ik/k oQ i.keè;krd e liUu gku oky CO_2 ;kfxdhdj.k oQ mRikn ,d 4 dkcu ;kfxd gA iykPNn dkf'kdk e oQfYou iFk pyk;k tkrk g] ftll dkckgkbMVl dk l'y"k.k gkrk gA

अभ्यास

1- ,d ik/ dk ckgj l n[kdj D;k vki crk ldr g fd og C_3 g vFkok C_4\ oQl vkj D;k\

2- ,d ik/ dh vkrfjd ljpuk dk n[kdj D;k vki crk ldr g fd og C_3 g vFkok C_4\ o.ku dj\

3- gkykfd C_4 ik/ e cgr de dkf'kdk, to&l'y"k.k & oQfYou iFk dk ogu djr g] fiQj Hkh o mPp mRikndrk oky gkr gA D;k bl ij ppk dj ldr gk fd ,lk D;k g\

4- #fcLdk (RuBisCO) ,d ,tkbe g tk dkckfDlyl vkj vkDlhftul oQ :i e dke djrk gA vki ,lk D;k ekur g fd C_4 ik/k e] #fcLdk vf/d ek=kk e dkckfDly'ku djrk g\

5- eku yhft,] ;gk ij Dyksjksfiy ch dh mPp lknrk ;Dr] exj Dyksjksfiy ए dh deh oky iM FkA D;k ; idk'k&l'y"k.k djr gkx\ rc ik/k e Dyksjksfiy बी D;k gkrk g\ vkj fiQj nlj xk.k o.kdk dh D;k t:jr g\

6- ;fn iÙkh dk v/j e j[k fn;k x;k gk rk mldk jx Øe'k% ihyk ,o gjk ihyk gk tkrk g\ dku l o.kd vkidh lkp e vf/d LFkk;h g\

7- ,d gh ik/ dh iÙkh dk Nk;k okyk (mYVk) Hkkx n[k vkj mloQ ped oky (lh/) Hkkx l ryuk dj vFkok xeyk e yx /i e j[k g, rFkk Nk;k e j[k g, ik/k oQ chp ryuk djA dku lk xgj gj jx dk gkrk g] vkj D;k\

8- idk'k&l'y"k.k dh nj ij idk'k dk iHkko iMrk g (fp=k 13-10)A xkiQ oQ vk/kj ij fuEufyf[kr i'uk oQ mÙkj n%
(v) oØ oQ fdl fcn vFkok fcnvk ij (d] [k] vFkok x) idk'k ,d fu;ked dkjd g\
(c) d fcn ij fu;ked dkjd dku l g\
(l) oØ e x vkj ?k D;k fu:fir djrk g\

9- fuEukfdr e ryuk dj&
(v) C_3 ,o C_4 iFk
(c) pØh; ,o vpØh; iQkVkiQkLiQkfjyl u
(l) C_3 ,o C_4 iknik dh iÙkh dh 'kkjhfjdh

अध्याय 14

पादप में श्वसन

14.1 क्या पादप साँस लेते हैं?

14.2 ग्लाइकोलिसिस

14.3 किण्वन

14.4 ऑक्सी श्वसन

14.5 श्वसनीय संतलन चार्ट

14.6 ऐंफीबोलिक पाथ क्रम

14.7 साँस गणांक

हम सभी जीवित रहने के लिए साँस लेते हैं, लेकिन जीवन के लिए साँस लेना इतना आवश्यक क्यों है? जब हम साँस लेते हैं, तब क्या होता है। क्या सभी जीवधारी. चाहे पादप हों या सूक्ष्म जीव साँस लेते हैं? यदि ऐसा है तो कैसे?

सभी जीवधारियों को अपने दैनिक जीवन में अवशोषण, परिवहन, गति, प्रजनन जैसे कार्य करने हेतु और यहाँ तक की साँस लेने हेतु भी ऊर्जा की आवश्यकता होती है। यह सभी ऊर्जा कहाँ से आती है? हम जानते हैं कि ऊर्जा के लिए हम भोजन करते हैं, लेकिन ये ऊर्जा भोजन से कैसे प्राप्त होती है? यह ऊर्जा कैसे उपयोग में आती है? क्या सभी प्रकार के खाद्य पदार्थों से समान प्रकार की ऊर्जा मिलती है? क्या पादप भोजन करते हैं? पादप यह ऊर्जा कहाँ से प्राप्त करते हैं? और सक्ष्मजीव इस ऊर्जा की आवश्यकता के लिए क्या भोजन करते हैं?

उपरोक्त किए गए अनेक प्रश्नों से आपको आश्चर्य हो रहा होगा कि इनमें बहुत अधिक सामंजस्य नहीं है। लेकिन वास्तव में साँस लेने की प्रक्रिया व खाद्य पदार्थ से मुक्त होने वाली ऊर्जा की प्रक्रिया में बहत अधिक संबद्धता होती है। हम यह समझने का प्रयास करें कि यह कैसे होता है?

जीवन विधि के लिए आवश्यक सभी ऊर्जा कुछ वृहत् अणुओं के ऑक्सीकरण से प्राप्त होती है, जिसे खाद्य पदार्थ कहते हैं। केवल हरे पादप व नीले हरित जीवाणु अपना भोजन स्वयं बना सकते हैं। ये प्रकाश-संश्लेषण विधि, द्वारा प्रकाशीय ऊर्जा को रसायनिक ऊर्जा में परिवर्तित कर कार्बोहाइड्रेट-ग्लूकोज, सुक्रोज व स्टार्च के रूप में संचित करते हैं। हमें यह याद रखना चाहिए कि हरे पादपों में भी सभी कोशिकाओं, ऊतकों, अंगों मे प्रकाश-संश्लेषण नहीं होता है. केवल वे कोशिकाएं. जिनमें क्लोरोप्लास्ट होता है. वे ही

प्रकाश-संश्लेषण करती हैं। चूंकि हरे पादपों में सभी अंग, ऊतक व कोशिकाएं हरी नहीं होती हैं, इसलिए इनमें ऑक्सीकरण के लिए खाद्य पदार्थ की आवश्यकता होती है। इसलिए खाद्य पदार्थ का अहरित भागों में परिवहन होता है। प्राणी परपोषित होते हैं, इसलिए वे अपना भोजन पादपों से परोक्ष (शाकाहारी), या अपरोक्ष (माँसाहारी) रूप में प्राप्त करते हैं। मृतजीवी जैसे कवक, मृत या सड़े गले पदार्थों पर निर्भर रहते हैं। यह जान लेना अति महत्वपूर्ण है कि जीवन में साँस हेतु आवश्यक सभी खाद्य पदार्थ प्रकाश-संश्लेषण द्वारा प्राप्त होते हैं। इस अध्याय में **कोशिकीय साँस** अथवा कोशिका में खाद्य पदार्थों के टूटने से निकलने वाली ऊर्जा की क्रियाविधि तथा एटीपी के संश्लेषण को समझाया गया है।

निसंदेह, प्रकाश-संश्लेषण क्लोरोप्लास्ट में संपन्न होता है (यूकैरियोट में), जबकि ऊर्जा प्राप्त करने के लिए कॉम्पलेक्स अणुओं का विघटन से कोशिका द्रव्य तथा माइटोकोंड्रिया में होता है (वह भी केवल यूकैरियोट में) जबकि कोशिकाओं में कॉम्पलेक्स अणुओं के **C-C** (कार्बन-कार्बन) आबंध के, ऑक्सीकरण होने पर पर्याप्त मात्रा में ऊर्जा का मुक्त होना **साँस** कहलाता है। इस प्रक्रिया में जिस यौगिक का ऑक्सीकरण होता है उसे **श्वसनी क्रियाधार** कहते हैं। प्रायः कार्बोहाइड्रेट के ऑक्सीकरण से ऊर्जा मुक्त होती है, किंतु कुछ पादपों में विशेष परिस्थितियों में प्रोटीन,वसा तथा यहाँ तक कि कार्बनिक अम्ल भी श्वसनी क्रियाधार के रूप में प्रयोग में आ सकते हैं। कोशिका के अंदर ऑक्सीकरण के दौरान श्वसनी क्रियाधार में स्थित संपूर्ण ऊर्जा कोशिका में एक साथ मुक्त नहीं होती है। यह एंजाइम द्वारा नियंत्रित चरणबद्ध धीमी अभिक्रियाओं के रूप में मुक्त होती है, जो रासायनिक ऊर्जा एटीपी के रूप मे एकत्रित हो जाती है। यहाँ यह समझ लेना आवश्यक है कि साँस में ऑक्सीकरण द्वारा निकलने वाली ऊर्जा सीधे उपयोग में नहीं आती (या संभवतया नहीं भी हो सकती) किंतु यह एटीपी के संश्लेषण के उपयोग में आती है तथा इस ऊर्जा की जब भी (तथा जहाँ भी) आवश्यकता होती है, ये टूट जाती हैं इस कारण से एटीपी कोशिका के लिए ऊर्जा मुद्रा का कार्य करती है। एटीपी में संचित उर्जा, जीवधारियों की विभिन्न ऊर्जा आवश्यक प्रक्रियाओं में उपयोग में आती है। साँस के दौरान निर्मित कार्बनिक पदार्थ कोशिका में दसरे अणओं के संश्लेषण के लिए पर्वगामी के रूप काम आते हैं।

14.1 क्या पादप साँस लेते हैं?

इस प्रश्न का कोई परोक्ष उत्तर नहीं है। हाँ पादपों में साँस हेतु ऑक्सीजन (O_2)की आवश्यकता होती है और वे कार्बन-डाइऑक्साइड (CO_2)को मुक्त करते हैं। इस कारण से पादपों में ऐसी व्यवस्था है, जिससे ऑक्सीजन(O_2)की उपलब्धता सुनिश्चित होती है। पादपों में प्राणियों की तरह गैसीय आदान-प्रदान हेतु विशिष्ट अंग नहीं होते, बल्कि उनमें इस उद्देश्य हेतु रंध्र व वातरंध्र मिलते हैं। पौधे बिना श्वसन अंग के कैसे श्वसन करते हैं, इसके कई कारण हो सकते हैं। प्रथम कारण यह है कि पादपों का प्रत्येक भाग अपनी गैसीय आदान-प्रदान की आवश्यकता का ध्यान रखता है। पादपों के एक भाग से दूसरे भाग में गैसों का परिवहन बहत कम होता है। दसरा कारण यह है कि पादपों में गैसों के

आदान-प्रदान की बहुत अधिक मांग नहीं होती। मूल, तना व पत्ती में श्वसन, जंतुओं की अपेक्षा बहुत ही धीमी दर से होता है। केवल प्रकाश-संश्लेषण के दौरान गैसों का अत्यधिक आदान-प्रदान होता है तथा प्रत्येक पत्ती, पूर्णतया इस प्रकार से अनुकूलित होती है कि इस अवधि के दौरान अपनी आवश्यकता का ध्यान रखती है। जब कोशिका श्वसन करती है। ऑक्सीजन की उपलब्धता की कोई समस्या नहीं होती है, क्योंकि कोशिका में प्रकाश-संश्लेषण के दौरान ऑक्सीजन निकलती है। तृतीय कारण यह है कि बड़े, स्थूल पादपों में गैसें अधिक दूरी तक विसरित नहीं होती हैं। पादपों में प्रत्येक सजीव कोशिका पादपों की सतह के बिल्कुल पास स्थित होती है। यह 'पत्ती के लिए सत्य कथन' है। आप यह पूछ सकते हैं कि मोटे, काष्ठीय तनों और मूल के लिए क्या होता है? तना में सजीव कोशिकाएं छाल व छाल के नीचे पतली सतह के रूप में व्यवस्थित रहती हैं। इनमें भी छिद्र होते हैं, जिन्हें वातरंध्र कहते हैं। भीतर की कोशिकाएं मृत होती हैं तथा यांत्रिक सहायता प्रदान करती हैं। अतः पादपों की अधिकांश कोशिकाओं की सतह हवा के संपर्क में होती है। यह पैरेंकाइमा कोशिकाओं के द्वारा इस कार्य को आगे बढ़ाते हैं जो कि वाय रिक्तकाओं के आपस में जुड़े हुए जालरूपी रचना के कारण संभव होता है।

ग्लूकोज के संपूर्ण दहन से अंतिम उत्पाद के रूप में कार्बनडाइऑक्साइड (CO_2) तथा जल (H_2O) के साथ ऊर्जा निकलती है जिसका सर्वाधिक भाग ऊष्मा के रूप मे निकल जाता है। यदि यह ऊर्जा कोशिका के लिए आवश्यक है तो इसका उपयोग कोशिका में दसरे अणओं के संश्लेषण में होना चाहिए।

$$C_6H_{12}O_6 + 6O_2 \longrightarrow 6\,CO_2 + 6H_2O + \text{ऊर्जा}$$

पादप कोशिकाएं इस तरह से भोजन बनाती हैं कि ग्लूकोज अणु के अपचय से निकलने वाली संपूर्ण ऊर्जा मुक्त उष्मा के रूप में न निकल पाए। मुख्य बात यह है कि ग्लूकोज का ऑक्सीकरण एक चरण में न होकर छोटे-छोटे अनेक चरणों में होता है, जिनमें कुछ चरण इतने बड़े होते हैं कि इनसे निकलने वाली पर्याप्त ऊर्जा एटीपी के संश्लेषण में उपयोग में आ जाती है। यह कैसे होता है, वास्तव में यही साँस का इतिहास है! साँस की क्रियाविधि के दौरान ऑक्सीजन का उपयोग होता है तथा कार्बनडाइऑक्साइड, जल तथा ऊर्जा उत्पाद के रूप में निकलती है। दहन अभिक्रिया के लिए ऑक्सीजन की आवश्यकता होती है। परंतु कुछ कोशिकाएं ऑक्सीजन की उपस्थिति और अनुपस्थिति में भी जीवित रहती हैं। *क्या आप ऐसी परिस्थितियों के बारे (और जीवों) में सोच सकते है जहाँ ऑक्सीजन उपलब्ध नहीं होती है।* विश्वास करने के लिए पर्याप्त कारण है कि प्रथम कोशिका इस ग्रह पर ऐसे वातावरण में मिली थी, जहाँ ऑक्सीजन उपलब्ध नहीं थी। आज भी उपलब्ध सजीवों में हम जानते हैं कि कुछ अनाक्सी (ऑक्सीजन रहित) वातावरण हेतु अपने को अनुकूलित कर चुके हैं। इनमें से कुछ विकल्पीय अनाक्सी हैं जबकि कुछ के लिए अनॉक्सी स्थिति की आवश्यकता अविकल्पीय होती है। हर स्थिति में सभी जीवों में एंजाइम तंत्र होता है जो ग्लूकोज को बिना ऑक्सीजन की सहायता से आंशिक रूप से ऑक्सीकृत करता है। इस प्रकार ग्लकोज का पाइरुविक अम्ल में विघटन **ग्लाइकोलिसिस** कहलाता है।

14.2 ग्लाइकोलिसिस

ग्लाइकोलिसिस शब्द की उत्पत्ति ग्रीक शब्द ग्लाइकोस अर्थात् शर्करा एवं लाइसिस अर्थात् टूटना से हुआ है। ग्लाइकोलिसिस की प्रक्रिया गुस्ताव इंबेडेन, ओटो मेयर हॉफ तथा जे पारानास द्वारा दिया गया तथा इसे सामान्यत: इएमपी पाथ कहते हैं। अनाक्सी जीवों में साँस की केवल यही प्रक्रिया है। ग्लाइकोलिसिस कोशिका द्रव्य में संपन्न होता है और यह सभी सजीवों में मिलता है । इस प्रक्रिया में ग्लूकोज आंशिक ऑक्सीकरण द्वारा पाइरुविक अम्ल के दो अणुओं में बदल जाता है। पादपों में यह ग्लूकोज सुक्रोज से प्राप्त होता है जो कि प्रकाश संश्लेषित कार्बन अभिक्रियाओं का अंतिम उत्पाद है या संचयित कार्बोहाइड्रेट से प्राप्त होता है। सुक्रोस इंवर्टेस नामक एंजाइम की सहायता से ग्लूकोज तथा फ्रुक्टोज में परिवर्तित हो जाता है। ये दोनों मोनोसैकेराइड्स सरलता से ग्लाइकोलाइटिक चक्र में प्रवेश कर जाते हैं।

ग्लूकोज एवं फ्रुक्टोज, हेक्सोकाइनेज एंजाइम द्वारा फॉस्फरिकृत होकर ग्लूकोज-6 फॉस्फेट बनाते हैं। ग्लूकोज का फॉस्फरिकृत रूप समायवीकरण द्वारा फ्रुक्टोज-6 फॉस्फेट में परिवर्तित हो जाता है। ग्लूकोज एवं फ्रुक्टोज के उपापचय के बाद के क्रम एक समान होते हैं। ग्लाइकोलिसिस के विभिन्न चरण चित्र 14.1 में दर्शाए गए हैं। ग्लाइकीलिसस में दस शृंखलाबद्ध अभिक्रियाओं में विभिन्न एंजाइम द्वारा ग्लूकोज से पाइरुवेट का निर्माण होता है। ग्लाइकोलिसिस के विभिन्न चरणों के अध्ययन के दौरान उन चरणों पर ध्यान दें जिसमें एटीपी का उपयोग (एटीपी ऊर्जा) अथवा संश्लेषण (इस मामले में $NADH+H^+$) होता है।

एटीपी का उपयोग दो चरणों में होता है: पहले चरण में जब ग्लूकोज-6 फॉस्फेट में परिवर्तन होता है तथा दूसरे चरण में व दूसरे फ्रुक्टोज-6 फॉस्फेट का फ्रक्टोज 1. 6. बिसफॉस्फेट में परिवर्तन होता है।

फ्रुक्टोज 1, 6 बिसफॉस्फेट टूटकर डाइहाइड्रोक्सीएसीटोन फॉस्फेट तथा 3-फॉस्फोग्लिसरल्डिहाइड (पीजीएएल) बनाता है। जब 3-फॉस्फोग्लिसरल्डिहाइड (पीजीएएल) का 1, 3-बाई फॉस्फोग्लिसरेट (बीपीजीए) में परिवर्तन होता है तो NAD^+ से $NADH+H^+$ का निर्माण होता है। पीजीएएल से दो समान अपचयोपचय (रिडॉक्स) दो हाइडोजन अण

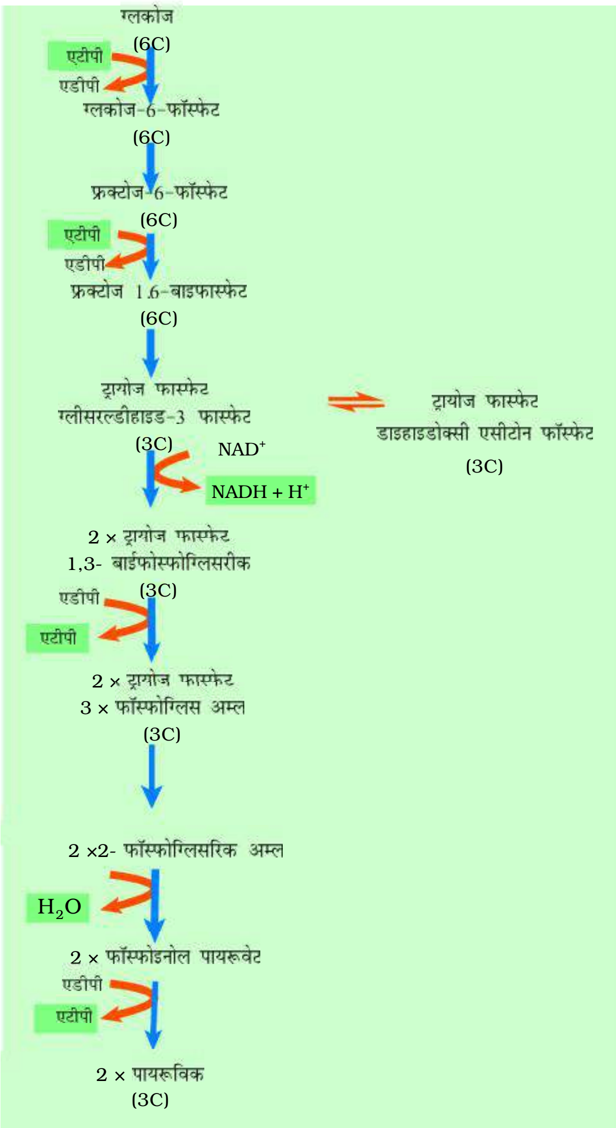

चित्र 14.1 ग्लाइकोलिसिस के चरण

पृथक होकर NAD के एक अणु की ओर स्थानांतरित होता है। पीजीएएल ऑक्सीकृत होकर अकार्बनिक फॉस्फेट से मिलकर बीपीजीए में परिवर्तित हो जाता है। डीपीजीए का 3- फॉस्फोग्लिसरीक अम्ल में परिवर्तन ऊर्जा उत्पादन करने वाली प्रक्रिया है। इस ऊर्जा का उपयोग एटीपी (ATP) निर्माण में होता है। पीईपी (P.E.P.) का पायरुविक अम्ल में परिवर्तन के दौरान भी एटीपी का निर्माण होता है। *क्या तुम यह गणना कर सकते हो कि एक अणु से कितने एटीपी के अणुओं का प्रत्यक्ष रूप से संश्लेषण होता है;*

पायरुविक अम्ल ग्लाइकोलिसिस का मुख्य उत्पाद है। पायरुवेट का उपापचयी भविष्य क्या है? यह कोशिकीय आवश्यकता पर निर्भर है। यहाँ तीन प्रमुख तरीके हैं- जिसमें विभिन्न कोशिकाएं ग्लाइकोलिसिस द्वारा उत्पन्न पायरुविक अम्ल का उपयोग करती हैं। ये लैक्टिक अम्ल किण्वन, एल्कोहलिक किण्वन और ऑक्सी साँस है। अधिकांश प्रोकैरियोट तथा एक कोशिका यूकैरियोट में किण्वन अनाक्सी परिस्थितियों में होता है। ग्लूकोज के पूर्ण ऑक्सीकरण के फलस्वरूप कार्बनडाइऑक्साइड तथा जल बनने हेतु जीवधारियों में क्रेब्स चक्र के द्वारा होता है. जिसे **ऑक्सी श्वसन** या साँस कहते हैं. जिसमें ऑक्सीजन की आवश्यकता होती है।

14.3 किण्वन

किण्वन में यीस्ट द्वारा ग्लूकोज का अनाक्सी परिस्थितियों में अपूर्ण ऑक्सीकरण होता है। जिसमें अभिक्रियाओं के विभिन्न चरणों द्वारा पायरुविक अम्ल, कार्बनडाइऑक्साइड तथा इथेनोल में परिवर्तित हो जाता है। एंजाइम पायरुविक अम्ल डिकार्बोक्सिलेज एवं एल्कोहल डिहाइडोजिनेस इस अभिक्रिया को उत्प्रेरित करता है। दूसरे जीव जैसे कुछ बैक्टीरिया पायरुविक अम्ल से लैक्टिक अम्ल का निर्माण करते हैं। ये चरण चित्र 14.2 में दर्शाए गए हैं। प्राणी की मांसपेशियों की कोशिकाओं में शारीरिक अभ्यास के दौरान जब कोशिकीय साँस के लिए अपर्याप्त ऑक्सीजन होती है तब पायरुविक अम्ल लैक्टिक डिहाइड्रोजिनेस द्वारा लैक्टिक अम्ल में अपचयित हो जाता है। अपचयीकारक NADH + H^+ होता है जो पुनः दोनों प्रक्रियाओं में NAD^+ में ऑक्सीकृत हो जाता है।

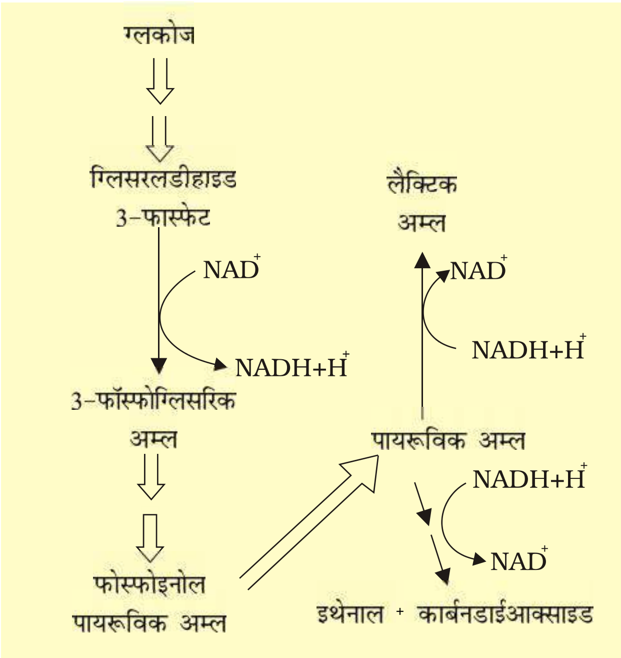

चित्र 14.2 श्वसन के प्रमख पथ

दोनों लैक्टिक अम्ल तथा एल्कोहल किण्वन में पर्याप्त ऊर्जा मुक्त नहीं होती है। ग्लूकोज से 7 प्रतिशत से कम ऊर्जा मुक्त होती है और इसकी संपूर्ण ऊर्जा का उपयोग उच्च ऊर्जा बंध वाले एटीपी (ATP) के निर्माण में नहीं होता है। अम्ल व एल्कोहल बनने वाली उत्पाद की प्रक्रिया खतरनाक होती है। ग्लूकोज के एक अणु से किण्वन के बाद एल्कोहल या लैक्टिक अम्ल बनने के दौरान कितने शद्ध एटीपी का संश्लेषण होता है। (अर्थात ग्लाइकोलिसिस

के दौरान उपयोग में आने वाले एटीपी (ATP) की संख्या घटाकर गणना करें कि कितने एटीपी (ATP) का संश्लेषण होता है)। जब एल्कोहल की मात्रा 13 प्रतिशत या अधिक होती है, तो यीस्ट के लिए यह विषाक्तता व मृत्यु का कारण बनती है। *प्राकृतिक किण्वत पेय में एल्कोहल की अधिकतम सांद्रता कितनी होगी? क्या आप सोच सकते हैं कि मादक पेय में एल्कोहल की मात्रा इसमें स्थित एल्कोहल की सांद्रता से अधिक कैसे प्राप्त की जा सकती है?*

वह क्या प्रक्रिया है जिसके द्वारा जीव में ग्लूकोज का पूर्ण ऑक्सीकरण होता है,और इस दौरान मुक्त ऊर्जा कोशिकीय उपापचय की आवश्यकता के अनुसार बहुत से एटीपी अणुओं का संश्लेषण करती है। यूकैरियोट में ये सभी चरण माइटोकोन्ड्रिया में संपन्न होते हैं। जिसके लिए ऑक्सीजन की आवश्यकता होती है। **ऑक्सी साँस** वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा रासायनिक पदार्थों का ऑक्सीजन की उपस्थिति में पूर्ण ऑक्सीकरण होता है तथा जिसके पश्चात् कार्बनडाइऑक्साइड, जल तथा ऊर्जा निकलती है। इस प्रकार का साँस सामान्यतया उच्च जीवों में मिलता है। हम इन प्रक्रियाओं को अगले खंड में पढेंगे।

14.4 ऑक्सी श्वसन (साँस)

माइटोकोंड्रिया में होने वाले ऑक्सी श्वसन के दौरान ग्लाइकोलिसिस का अंतिम उत्पाद पायरुवेट कोशिका द्रव्य से माइटोकोंडिया में परिवहन किया जाता है। ऑक्सी श्वसन की मख्य घटनाएं निम्नलिखित हैं–

- पायरुवेट का चरणबद्ध क्रम में पूर्ण ऑक्सीकरण के उपरांत सभी हाइड्रोजन परमाणु पृथक होते हैं जिससे 3 कार्बनडाइऑक्साइड के अणु भी मुक्त होते हैं।
- हाइड्रोजन परमाणुओं से पृथक् हुए इलेक्ट्रॉन ऑक्सीजन अण की ओर जाते हैं। जिसके परिणामस्वरूप एटीपी का संश्लेषण होता है।

सबसे अधिक रोचक बात यह है कि इसकी पहली प्रक्रिया माइटोकोंड्रिया के आधात्री में संपन्न होती है जब कि द्वितीय प्रक्रिया माइटोकोंड्रिया की भीतरी झिल्ली पर संपन्न होती है। कोशिका द्रव्य में उपस्थित कार्बोहाइड्रेट के ग्लाइकोलिटिक अपचय द्वारा बनने वाले पायरुवेट माइटोकोंड्रिया की आधात्री में प्रवेश करता है जो ऑक्सीकृत कार्बोक्सिलिकरण की कॉम्पलेक्स सामूहिक क्रिया द्वारा पायरुवेट डिहाइड्रोजिनेस एंजाइम द्वारा उत्प्रेरित होता है। पायरुविक डिहाइड़ोजिनेस अभिक्रियाओं में कई सह एंजाइम भाग लेते हैं। जैसे NAD^+ तथा A सहएंजाइम।

$$\text{ik;\#fod vEy} + CoA + NAD^+ \xrightarrow[\text{ikb\#oV fMgkbMkftut}]{Mg^{2+}} \text{, lhVkby } CoA + CO_2 + NADH + H^+$$

इस प्रक्रिया के दौरान पायरुविक अम्ल के दो अणुओं के उपापचय से NADH के दो अणुओं का निर्माण होता है। (ग्लाकोलिसिस के दौरान ग्लकोज के एक अण से निर्मित होते हैं)

ऐसीटाइल CoA चक्रीय पथ, ट्राइकार्बोक्सिलिक अम्ल चक्र में प्रवेश करता है। जिसे साधारणतया वैज्ञानिक हैन्स क्रेब की खोज के कारण क्रेब्स चक्र कहते हैं।

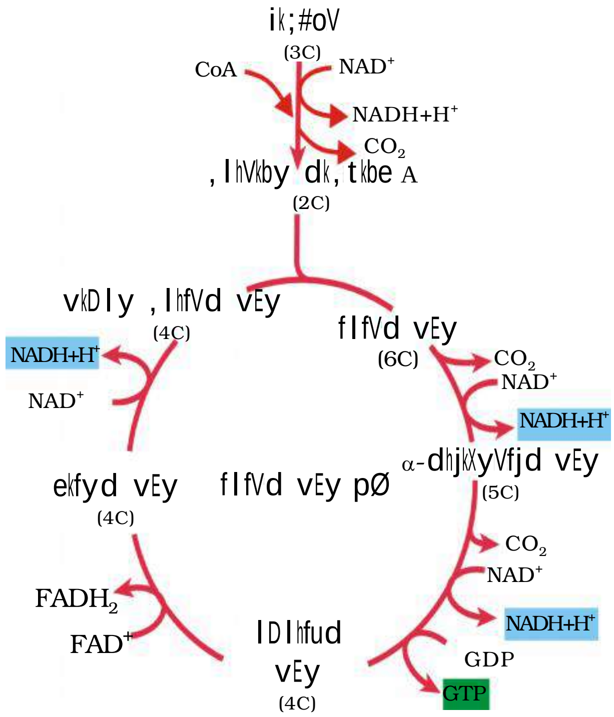

चित्र 14.3 flfVd vEy pØ

14.4.1 ट्राइकार्बोक्सिलिक अम्ल चक्र (टीसीए)

TCA pØ dk ikjHk ,lhVkby leg oQ vkDlyk ,flfVd vEy (OAA) rFkk ty oQ lkFk l?kuu l gkrk g vkj flfVd vEy dk fuek.k gkrk g (fp=k 14-3) ;g vfHkfØ;k flVV flFkVt ,tkbe }kjk gkrh g rFkk CoA dk ,d v.k eDr gkrk gA rc flVV] vkblkflVV e lek;for gk tkrk gA ;g fMdkckfDlfydj.k oQ nk yxkrkj pj.kk oQ :i e gkrk gA bloQ mijkr ,YiQkdhVk XyVfjd vEy] rRi'pkr lDlhukby CoA dk fuek.k gkrk gA flfVd vEy oQ cp g, pj.kk e lDlhukby CoA, OAA (vkDlyk, lhfVd vEy) e vkDlhÑr gkdj pØ dk vkx c<kuu e lgk;d gkrk gA lDlhukby (CoA) l lDlhfud vEy oQ :ikrj.k oQ nkjku thVhih oQ ,d v.k dk fuek.k gkrk gA bl fØ;k/kj Lrjh; iQkLiQkfjfydj.k dgr gA bu ;fXer vfHkfØ;kvk e thVhih] thMhih e :ikrfjr gk tkrk g rFkk ,Mhih l ,Vhih dk fuek.k gkrk gA pØ e rhu LFkku ,l gkr g ftle NAD^+ dk $NADH + H^+$ e vip;u gkrk g vkj ,d LFkku ij FAD^+ dk $FADH_2$ e vi;pu gkrk gA Vh lh, pØ }kjk ,flfVy CoA dk ,tkbel vEy oQ fujrj vkDlhdj.k gr vkDlyk, lhVV vEy oQ iufuek.k dh vko';drk gkrh g] tk pØ dk iFke lnL; gA bloQ lkFk&lkFk NAD^+ rFkk FAD^+ dk NADH o $FADH_2$ l Øe'k% iu%mRiknu gkrk gA vr% lkl dh bl voLFkk oQ lehdj.k dk l{ki e fuEuor fy[kk tk ldrk g%

$$\text{ik;\#fod vEy} + 4NAD^+ + FAD^+ + 2H_2O + ADP + Pi \xrightarrow{\text{ekbVkdkfM;y vk/k=kh}} 3CO_2 + 4NADH + 4H^+ + FADH_2 + ATP$$

vc rd ge n[k poQ g fd TCA pØ e Xydkt oQ fo[kMu l dkcuMkbvkDlkbM (CO_2) fudyrh g] $NADH + H^+$ oQ vkB v.k] $FADH_2$ oQ nk v.k rFkk nk ,Vhih v.kvk dk fuek.k gkrk gA vkidk vk'p; gk jgk gkxk fd vHkh rd lkl dh ppk oQ nkjku u gh dgh ij vkDlhtu dk rFkk u gh dgh ij ,Vhih oQ cgr lkj v.kvk oQ fuek.k dh ppk gb gA vc l'yf"kr $NADH + H^+$ rFkk $FADH_2$ dh D;k Hkfedk gkxhA ge vc le>uk gkxk fd lkl e vkDlhtu dh Hkfedk rFkk ,Vhih dk fuek.k oQl gkrk g\

14.4.2 इलेक्ट्रॉन परिवहन तंत्र अथवा ऑक्सीकरणी फॉस्फोरिलिकरण

lkl iØ;k oQ vxy pj.k e $NADH + H^+$ rFkk $FADH_2$ e lfpr Åtk eDr o mi;kx e ykuk gA ;g rc lEikfnr gkrk gA tc mudk vkDlhdj.k byDVku ifjogu r=k }kjk gkrk g rFkk byDVku vkDlhtu ij pyk tkrk g rFkk ikuh dk fuek.k gkrk

gA mikip;h iFk ftlo0 }kjk byDVªku ,d okgd l vU; okgd dh vkj xtjrk g bl **इलेक्ट्रॉन परिवहन तंत्र (ETS)** dgr g] (fp=k 14-4) tk ekbVkdkfM;k o0 fHkrjh f>Yyh ij LFkr gkrk gA ekbVkdkfM;k o0 vk/k=kh e Vh l h, pØ o0 nkjku NADH l cuu oky byDVku] ,tkbe NADH fMgkbMkftut }kjk vkDlhÑr gkrk g (dkEiyDl&I)] rRi'pkr byDVku Hkhrjh f>Yyh e mifLFkr ;chfDohuku dh vkj LFkkukrfjr gkrk gA ;chfDouku vip;h lerY; $FADH_2$ }kjk iklr djrk g (dkEiyDl&II) tk flfVd vEy pØ e lDlhu o0 vkDlhdj.k o0 nkjku mRiUu gkr gA vipf;r ;fcfDouku (;fcfDouky) byDVku dk lkbVkØke bc_1 lkbVkØke c dh vkj LFkkukrfjr dj vkDlhÑr gk tkrk g (dkEiyDl&III)A lkbVkØke c ,d NkVk ikVhu g tk] Hkhrjh% f>Yyh dh ckà lrg ij fpidk gkrk g tk byDVku dk dkEiyDl&III rFkk dkEiyDl&IV o0 chp LFkkukrj.k dk dk; xfr'khy okgd o0 :i e djrk gA dkEiyDl&IV lkbVkØke c vkDlhMt dkEiyDl g] ftle lkbVkØke a. a_3 rFkk nk rkck dn feyr gA

tc byDVku] byDVku ifjogu k[kyk e ,d okgd l nlj okgd rd dkEiyDl&I l dkEiyDl&IV }kjk xtjr g] rc o ,Vhih flFkt (dkEiyDl&V) l ;fXer gkdj ,Mhih o vdkcfud iQkLiQV l ,Vhih dk fuek.k djr gA bl nkjku l'yf"kr gku okyh ,Vhih v.kvk dh l[;k byDVku nkrk ij fuHkj gA NADH o0 ,d v.k o0 vkDlhdj.k l ,Vhih o0 rhu v.kvk dk fuek.k gkrk g tcfd $FADH_2$ dk ,d v.k l ,Vhih dk nk v.k curk g tcfd lkl dh vkDlh iØ;k vkDlhtu dh mifLFkfr e gh liUu gkrh gA iØ;k o0 vfre pj.k e vkDlhtu dh Hkfedk lhfer gkrh gA ;|fi vkDlhtu dh mifLFkfr vR;ko';d g_ D;kfd ;g ij r=k l H_2 (gkbMkstu) dk eDr dj ijh iØ;k dk lpkfyr djrh gA vkDlhtu vfre gkbMkstu xkgh o0 :i e dk; djrk gA idk'k iQkLiQkfjfydj.k o0 foijhr] tgk ikVhu io.krk o0 fuek.k e idk'k Åtk dk mi;kx iQkLiQkfjfydj.k o0 fy, gkrk g] lkl e blh idkj dh iØ;k e vkDlhdj.k vip;u }kjk Åtk dh ifr gkrh gA iQyLo:i bl dkj.k l gb fØ;kfof/ dk vkDlhdkjh&iQkLiQkfjfydj.k dgr gA

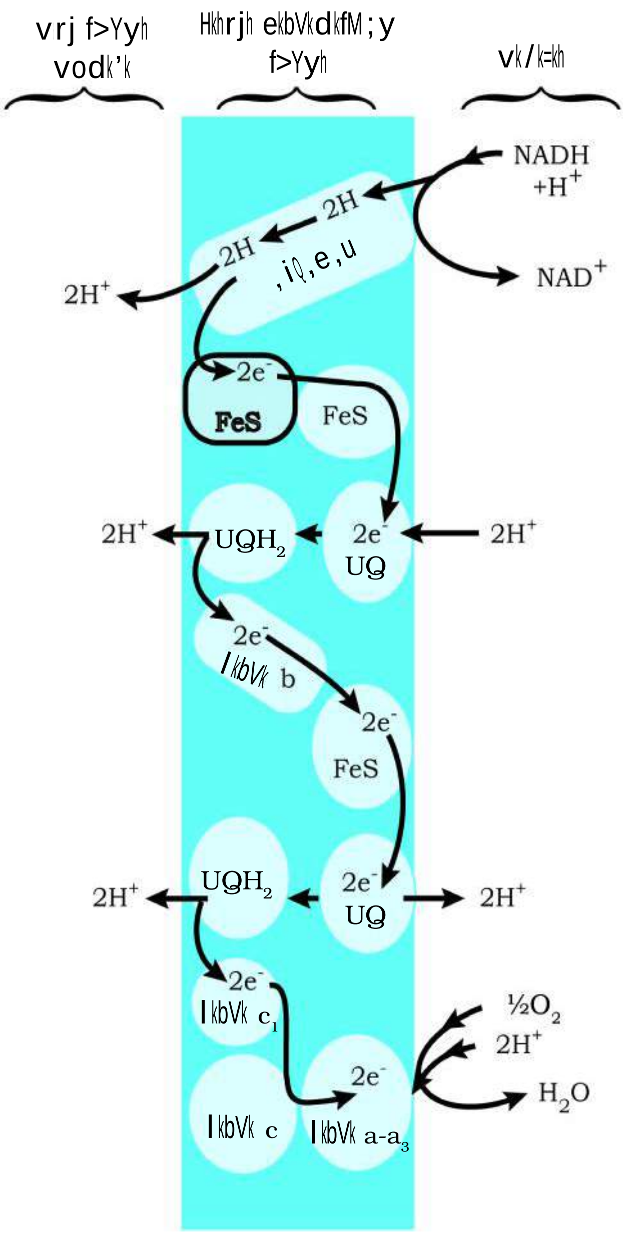

चित्र 14.4 byDVku r=k

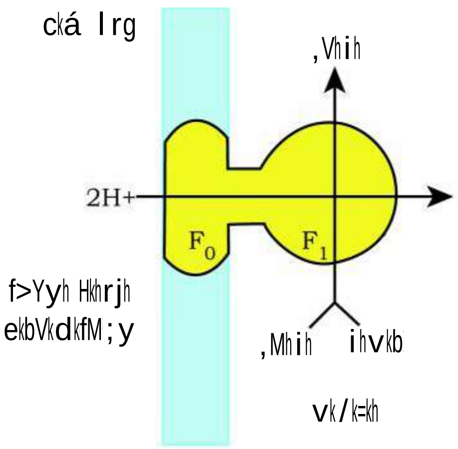

चित्र 14.5 ekbVkdkfM;k e ,Vhih l'y"k.k dk fp=kkRed in'ku

f>Yyh l tM ,Vhih l'y"k.k dh fØ;kfof/ oQ ckj e vki igy gh i< poQ g ftl fiNy vè;k; e jlkijklj.k ifjdYiuk (oQfe;kvkLekfVd gkbiksFkfll) oQ vk/kj ij crk;k x;k gA tlk fd igy of.kr g fd byDVku ifjogu r=k oQ nkjku eDr Åtk dk mi;kx ,Vhih flFkt (dkEiyDl&v) dh lgk;rk l ,Vhih oQ l'y"k.k e gkrk gA ;g dkEiyDl] nk ie[k ?kVdk F_0 o F_1 l cuk g (fp=k 14-5) F_1 'kh"k ifjèkh; f>Yyh ikVhu dkEiyDl g] tgk ij vdkcfud iQkLiQV rFkk ,Mhih l ,Vhih dk l'y"k.k gkrk gA o|r jlk;u ikVku io.krk oQ iQyLo:i $2H^+$ vk;u vrj f>Yyh vodk'k l F_0 e gkdj vk/k=kh dh vkj xfr djrk g ftll ,d ,Vhih dk l'y"k.k gkrk gA

14.5 श्वसनीय संतलन चार्ट

iR;d vkDlhÑr Xydkt v.kq l cuu oky ikIr 'kq¼ ,Vhih dh x.kuk djuk vc lHko g] fdr okLrfodrk e ;g ,d l¼kfrd vH;kl gh jg x;k gA ;g x.kuk oQN fuf'pr dYiukvk oQ vk/kj ij gh dh tk ldrh gA

- ;g ,d Øfed] lO;ofLFkr] fØ;kRed ikFk g ftle ,d fØ;k/kj l nlj fØ;k/kj dk fuek.k gkrk g ftle Xykbdkfyfll l 'k: gkdj Vhl, pØ rFkk iFk (ETS) ,d oQ ckn ,d vkrh gA
- Xykbdkfyfll e l'yf"kr NADH ekbVkdkfM;k e vkrk g] tgk mldk iQkLiQkfjyhdj.k gkrk gA
- iFk dk dkb Hkh eè;orh nlj ;kfxd oQ fuek.k oQ mi;kx e ugh vkr gA
- 'olu e oQoy Xydkt dk gh mi;kx gkrk gµ dkb nljk odfYid fØ;k/kj iFk oQ fdlh Hkh eè;orh pj.k e io'k ugh djrk gA

gkykfd bl idkj dh dYiuk lthoh r=k e okLro e rdlxr ugh gkrh g_ lHkh iFk ,d oQ ckn ,d ugh] cfYd ,d lkFk dk; djr gA iFk e fØ;k/kj vko';drk vulkj ckgj rFkk vnj vk tk ldr g_ vko';drkulkj ,Vhih dk mi;kx gk ldrk g_ ,tkbe dh fØ;k dh nj dk vudk fof/;k }kjk fu;f=kr fd;k tkrk gA fiQj Hkh ;g fØ;k djuk mi;kxh g_ D;kfd lthoh r=k e Åtk dk fu"d"k.k ,o lxg.k gr bldh n{krk ljkguh; gA vr% vkDlh 'olu oQ nkjku Xydkt oQ ,d v.kq l ,Vhih oQ 36 v.kvk dh 'kq¼ ikflr gkrh gA

vc ge fd.ou rFkk vkDlh 'olu dh ryuk djA

- fd.ou e Xydkt dk vkf'kd fo?kVu gkrk g tcfd vkDlh 'olu e i.k fo?kVu gkrk g rFkk dkcuMkbvkDlkbM ,o ty cur gA
- fd.ou e Xydkt oQ ,d v.kq l ik;#fod vEy cuu oQ nkjku ,Vhih oQ

'k¼ 2 v.kvk dh ikfl r gkrh g] tcfd vkDl h 'olu e cgr vf/d ,Vhih oQ v.k cur gA
- fd.ou e NADH dk NAD$^+$ e vkDl hdj.k en xfr l gkrk g] tcfd vkDl h 'olu e ;g vfHkfØ;k rho xfr l gkrh gA

14.6 ऐंफीबोलिक पथ

lkl oQ fy, Xydkst vudy fØ;k/kj g 'olu e lHkh dkcksgkbMV mi;kx e ykus l igy Xydkst e ifjofrr gkr gA tl fd igy crk;k tk pdk g fd nlj fØ;k/kj Hkh lkl e i;kx fd, tk ldr gA fdr rc o lkl oQ igy pj.k e mi;kx e ugh vkr gA fp=k 14-6 dk nf[k, fd fofHkUu fØ;k/kj 'olu iFk e dgk mi;kx djr gA olk lcl igy fXyljy rFkk olh; vEy e fo?kfVr gkrk gA ;fn

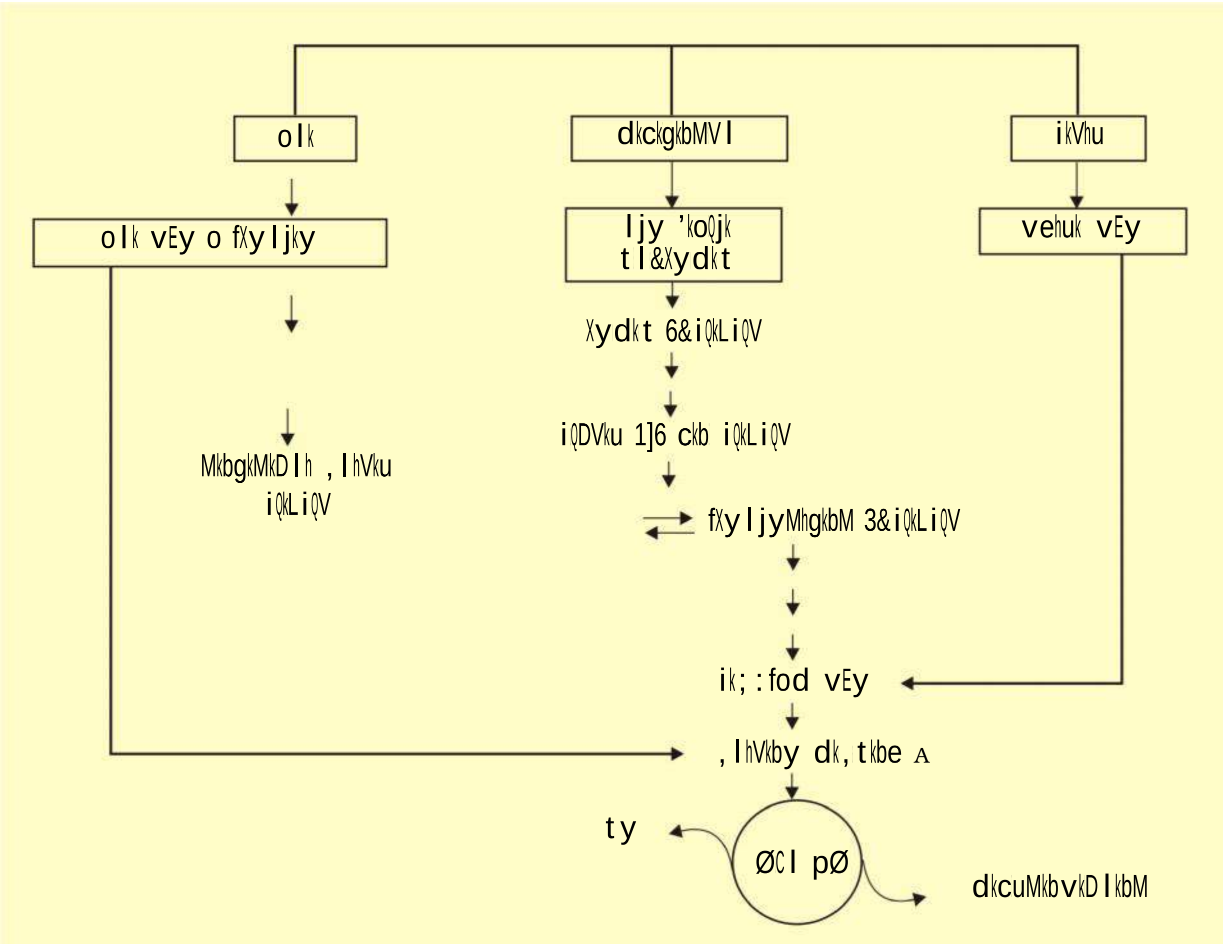

चित्र 14.6 'olu eè;LFkrk oQ nkjku fofHkUu dkcfud v.kvk dk o ty e fo[kMu dk n'kku okyk mikip; iFkØe oQ vkilh lc/ dk in'ku

olh; vEy lkl oQ mi;kx e vkrk g rk og igy ,lhVkby lg&,tkbe cudj iFk e io'k djrk gA fXyljy igy ihth,,y (PGAL) e ifjofrr gkdj 'olu iFk e io'k djrk gA ikVhu ikfV,t ,tkbe }kjk fo?kfVr gkdj vehuk vEy cukrk gA iR;d vehuk vEy (fo,ehuhdj.k oQ ckn) viuh ljpuk oQ vk/kj ij ØCl pØ oQ vnj fofHkUu pj.kk e io'k djrk gA

pfd lkl oQ nkjku fØ;k/kjd VVr g] vr% lkl ifØ;k ijijkxr vip;h ifØ;k g vkj 'olu iFk 'oluh; vip;h iFk gA fdr vki D;k bl Bhd le>r g\ Åij of.kr g fd fofHkUu fØ;k/kj Åtk gr 'olu iFk e dgk io'k djr gA ;g tkuuk egRoi.k g fd ; ;kfxd mijkDr fØ;k/kj cuku oQ fy, 'oluh; iFk l vyx gkxA vr% iFk e io'k dju l igy olk vEy tc fØ;kèkkj oQ :i e mi;kx e vkr g rk 'oluh; iFk e mi;kx e vku l io ,lhVkby CoA e fo[kfMr gk tkrk gA tc tho/kjh dk olk vEy dk l'y"k.k djuk gkrk g rk 'oluh iFk ,lhVkby CoA vyx gk tkrk gA blfy, olk vEy oQ l'y"k.k rFkk fo[kMu oQ nkjku 'oluh; iFk dk mi;kx gkrk gA blh idkj l ikVhu oQ l'y"k.k o fo[kMu oQ nkjku Hkh gkrk gA bl idkj fo?kVu dh ifØ;k de djrk gA lthok e vip; dgykrh g rFkk l'y"k.k mip; dgykrh g, nfd 'oluh iFk e vip; rFkk mip; nkuk gh gkr gA blfy, 'oluh iFk dk **ऐंफीबोलिक पथ** dguk mfpr gkxk u fd mip; iFk_ D;kfd ;g vip;h o mip;h nkuk e Hkkx yrh gA

14.7 साँस गणांक

vc lkl oQ nlj i{k dk n[kr gA tlk fd vki tkur g fd vkDlh 'olu oQ nkjku vkDlhtu dk mi;kx gkrk g vkj dkcuMkbvkDlkbM fudyrh gA lkl oQ nkjku eDr gb dkcuMkbvkDlkbM rFkk mi;kx e ykb xb vkDlhtu dk vuikr dk **साँस गणांक** (R.Q.) ;k **श्वसनीय अनपात** dgr gA

$$\text{lkl x.kkd} = \frac{\text{eDr gb } CO_2 \text{ dk vk;ru}}{\text{mi;kx e ykb xb } O_2 \text{ dk vk;ru}}$$

lkl x.kkd] lkl oQ nkjku mi;kx e vku oky 'oluh fØ;k/kj ij fuHkj djrk gA tc dkckgkbMM fØ;k/kj oQ :i e vkdj i.k vkDlhÑr gk tkr g rk lkl x.kkd 1 gkxk_ D;kfd leku ek=kk e CO_2 o O_2 Øe'k% eDr gkrh g ,o mi;kx e ykb tkrh g] tlk fd lehdj.k l Li"V g%

$$C_6H_{12}O_6 + 6O_2 \longrightarrow 6CO_2 + 6H_2O + \text{Åtk}$$

$$\text{lkl x.kkd (R.Q.)} = \frac{6\,CO_2}{6O_2} = 1.0$$

$$2(C_{51}H_{98}O_6) + 145\ O_2 \longrightarrow 102\ CO_2 + 98\ H_2O + \text{mtk}$$

$$\text{lkl x.kkd (R.Q.)} = \frac{102\ CO_2}{145\ O_2} = 0.7$$

tc olk lkl e i;Dr gkrh g rk lkl x.kkd 1-00 l de gkrk gA olk vEy VkbikekfVu oQ :i e mi;kx e vkrk g rc bldh x.kuk fuEuor gkxh%

tc ikVhu 'olu fØ;k/kj oQ :i e i;Dr gkrk g rc vuikr 0-9 oQ yxHkx gkr gA

;gk] ;g tkuuk vfregRoi.k g fd lthok e 'oluh; fØ;kèkkj vDlj ,d l vf/d gkr g_ foQr 'k¼ ikVhu o olk 'oluh fØ;k/kjk oQ :i e i;Dr ugh gkr gA

सारांश

ikf.k;k dh rjg ikni e 'olu ;k xlh; vknku inku gr dkb fof'k"V r=k ugh gkrk gA j/ o okrj/ }kjk folj.k l xlk dk vknku inku gkrk gA ik/k e yxHkx lHkh ltho dkf'kdk, ok; oQ lid e gkrh gA

tfVy dkcfud v.kvk oQ vkDlhdj.k }kjk C-C vko/k oQ VVu oQ mijkr tc dkf'kdk l Åtk dh vR;f/d ek=k fudyrh g rk ml dkf'kdh; lkl dgr gA lkl oQ fy, Xydkt lokf/d mi;kxh fØ;k/kj gA olk ,o ikVhu oQ VVu oQ ckn Hkh Åtk fudyrh gA dkf'kdh; lkl dh ikjfHkd ifØ;k dkf'kdk n0; e liUu gkrh gA iR;d Xydkt dk v.k ,tkbe mRifjr k[kykvk dh vfHkfØ;kvk }kjk ik;#fod vEy oQ 2 v.kvk e VV tkrk g] bl ifØ;k dk Xykbdkfyfll dgr gA ik;#oV dk Hkfo"; O_2 dh miyC/rk rFkk tho ij fuHkj djrk gA vukDlh ifjfLFkfr;k e fd.ou }kjk yfDVd vEy ;k ,Ydkgy curk gA fd.ou cgr lkj ikoQ fj;kfVd] ,d dkf'kd ;oQfj;kV o voQfjr chtk e vukDlh ifjfLFkfr;k e liUu gkrk gA ;oQfj;kV thok e O_2 dh mifLFkfr e vkDlh lkl gkrk gA ik;#fod vEy dk ekbVkdkfM;k e ifjogu oQ ckn ,lhVkby CoA e :ikrj.k gkrk g lkFk gh CO_2 fudyrh gA rRi'pkr ,lhVkby CoA Vhlh, iFk vFkok ØCl pØ e io'k djrk g tk ekbVkdkfM;k oQ vk/k=kh e gkrk gA ØCl pØ e NADH + H+ rFkk NADH$_2$ curk gA bu v.kvk o NADH + H+ tk Xykbdkfyfll oQ nkjku curk gA budh Åtk dk mi;kx ,Vhih oQ l'y"k.k e gkrk gA ;g l{edf.kdk oQ vr% f>Yyh ij fLFkr okgdk oQ r=k] ftl byDVku ifjogu r=k dgr g] oQ }kjk liUu gkrh g tc byDVku bl r=k l gkdj xfr djrk g] rk fudyu okyh i;klr Åtk ,Vhih dk l'y"k.k gkrk g] bl vkDlhdkjh iQkLiQkfjyhdj.k dgr g] bl ifØ;k e vrr% vfre byDVku xkgh O_2 gkrk g] tk ikuh e vipf;r gk tkrk gA

'oluh iFk e mip;h vFkok vip;h nkuk Hkkx yr g] blfy, bl ,iQhcfyd iFk dgr gA lkl x.kkd lkl oQ nkjku e vku oky 'oluh fØ;k/kj ij fuHkj djrk gA

अभ्यास

1- bue vrj dfj,\
(v) lkl ('olu) vkj ngu
(c) Xykbdkfyfll rFkk ØCl pØ
(l) vkDlh 'olu rFkk fd.ou

2- 'oluh; fØ;k/kj D;k g\ lokf/d lk/kj.k fØ;k/kj dk uke crkb,\

3- Xykbdkfyfll dk j[kk }kjk cukb,\

4- vkDlh 'olu oQ e[; pj.k dku&dku l g\ ;g dgk l iUu gkrh g\

5- ØCl pØ dk lex j[kk fp=k cukb,\

6- byDVku ifjogu r=k dk o.ku dhft,\

7- fuEu oQ eè; vrj dhft,\
(v) vkDlh 'olu rFkk vukDlh 'olu
(c) Xykbdkfyfll rFkk fd.ou
(l) Xykbdkfyfll rFkk flfVd vEy pØ

8- 'k¼ ,Vhih oQ v.kvk dh ikflr dh x.kuk oQ nkjku vki D;k dYiuk, djr g\

9- ^'oluh; iFk ,d ,iQhckfyd iFk gkrk g*] bldh ppk djA

10- lkl x.kkd dk ikfjHkkf"kr dhft,] olk oQ fy, bldk D;k eku g\

11- vkDlhdkjh iQkLiQkfjyhdj.k D;k g\

12- lkl oQ iR;d pj.k e eDr gku okyh Åtk dk D;k egRo g\

अध्याय 15

पादप वद्धि एवं परिवर्धन

15.1 वद्धि

15.2 विभेदन, निर्विभेदन तथा पुनर्विभेदन

15.3 परिवर्धन

15.4 पादप वद्धि नियामक

15.5 दीप्तिकालिता

15.6 वसंतीकरण

आपने पहले ही इस इकाई के अध्याय 5 के अंतर्गत फूल वाले पौधे के संगठन के बारे में अध्ययन किया है। क्या आपने कभी सोचा है कि मूल, तना, पत्तियां, फूल तथा बीज जैसी संरचनाएं कहाँ और कैसे पैदा होती हैं और वह भी एक क्रमबद्ध तरीके से? अब आप बीज, पौध (नव अंकुरित पौधा), पादपक (छोटा पौधा) तथा परिपक्व पौधे जैसे शब्दों से परिचित हो गए हैं। आपने यह भी देखा है कि सभी पेड़ समय के अंतराल में ऊंचाई एवं गोलाई (चौड़ाई) में लगातार वृद्धि करते हैं। हालाँकि उसी वृक्ष की पत्तियां, फूल एवं फल आदि न केवल एक सीमित लंबाई-चौड़ाई के होते हैं, बल्कि समयानुकूल वृक्ष से निकलते एवं गिर जाते हैं। यही प्रक्रिया लगातार दोहराई जाती है। एक पौधे में फूल आने की प्रक्रिया कायिक वृद्धि के बाद क्यों होती है? सभी पौधों के अंग विभिन्न तरह के ऊतकों से बने होते हैं। क्या एक कोशिका/ऊतक/अंग की संरचना और उसके द्वारा संपन्न जाने वाली क्रियाकलाप के बीच कोई संबंध है? पौधे की सभी कोशिकाएं युग्मज की संतति या वंशज होती है। तब सवाल यह उठता है कि क्यों और कैसे उनमें भिन्न-भिन्न संरचनात्मक एवं क्रियात्मक विशेषताएं होती हैं? परिवर्धन दो प्रक्रियाओं का योग है: वृद्धि एवं विभेदन। शुरुआत में यह जानना अनिवार्य है कि एक परिपक्व वृक्ष का परिवर्धन एक युग्मक (एक निषेचित अंडा) से शुरू होकर एक सुनिश्चित एवं उच्च नियमित वंशानुक्रम की घटना है। इस प्रक्रिया के दौरान एक जटिल शरीर संरचना का गठन होता है जो जड़ों, पत्तियों, शाखाओं, फलों. फलों एवं बीजों को उत्पादित करता है और अंततः वे मर जाते हैं। (चित्र 15.1)[4]

इस अध्याय में; आप कुछ उन कारकों के बारे में पढ़ेंगे जो कि इस परिवर्धन प्रक्रिया को संचालित एवं नियंत्रित करते हैं। ये कारक एक पौधे के लिए आंतरिक एवं बाहरी होते हैं।

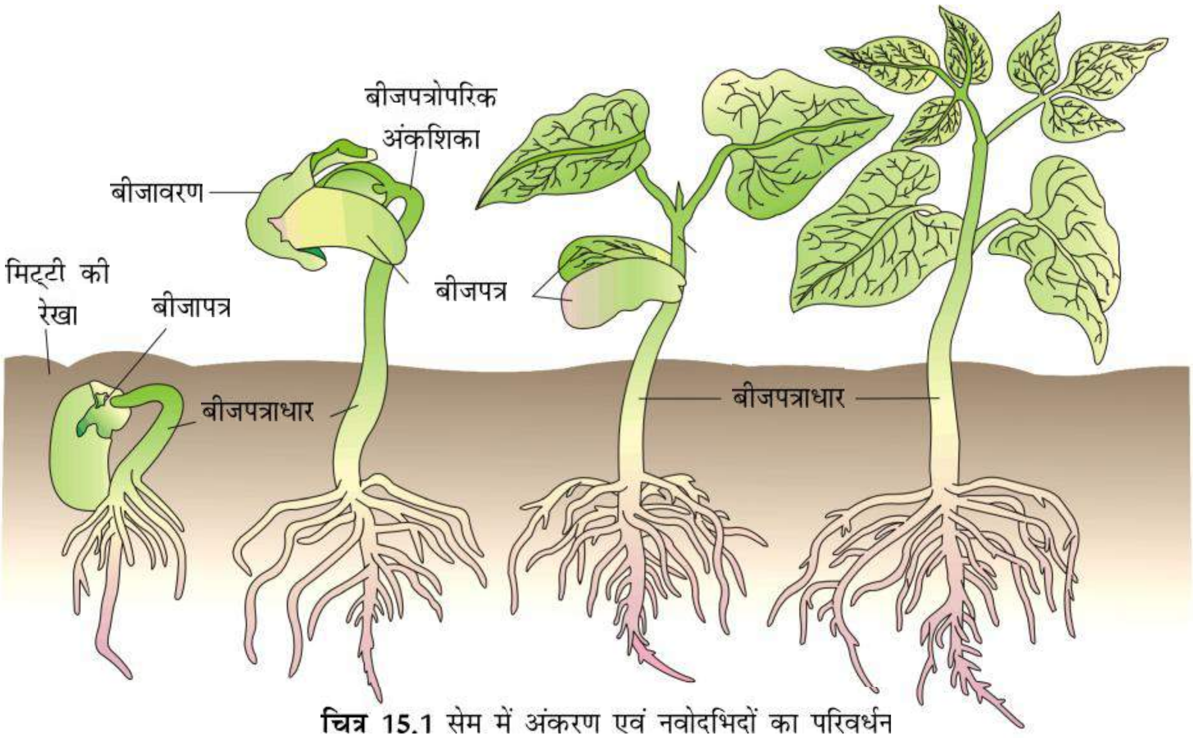

चित्र 15.1 सेम में अंकरण एवं नवोदभिदों का परिवर्धन

15.1 वद्धि

एक जीवित वस्तु के लिए वृद्धि को सर्वाधिक आधारभूत एवं सुस्पष्ट विशिष्टता के रूप में जाना जाता है। वृद्धि क्या है? वृद्धि को एक अवयव या अंग या इसके किसी भाग या यहाँ तक कि एक कोशिका के आधार में अनिवर्त्य (अनपलट) स्थाई बढ़त के रूप में पारिभाषित किया जा सकता है। सामान्यत: वृद्धि उपापचयी प्रक्रियाओं (उपचय एवं अपचय दोनों से) से जुड़ा होता है जो ऊर्जा के व्यय पर आधारित होता है। इसलिए एक पत्ती का विस्तार वृद्धि है। आप एक लकडी के टकडे को पानी में डालने से हए फैलाव या विस्तार का वर्णन कैसे करेंगे?

15.1.1 पादप वद्धि प्राय: अपरिमित है

पादप वृद्धि अनूठे ढंग से होती है; क्योंकि पौधे जीवन भर असीमित वृद्धि की क्षमता को अर्जित किए होते हैं। इस क्षमता का कारण उनके शरीर में कुछ खास जगहों पर विभज्योतक (मेरिस्टेम) ऊतकों की उपस्थिति है। ऐसे विभज्योतकों की कोशिकाओं में विभाजन एवं स्वशाश्वतता (निरंतरता) की क्षमता होती है। हालाँकि यह उत्पाद जल्द ही विभाजन की क्षमता खो देते हैं और ऐसी कोशिकाएं जो विभाजन की क्षमता खो देती है, वे पादप शरीर की रचना करती है। इस प्रकार की वृद्धि जहाँ पर विभज्योतक की क्रियात्मकता से पौधे के शरीर में सदैव नई कोशिकाओं को जोड़ा जाता है, उसे वृद्धि का खुला स्वरूप कहा जाता है। क्या होगा जब विभज्योतक का विभाजन बंद हो जाए? क्या कभी ऐसा होता है?

आपने अध्याय 6 में मूल शिखाग्र विभज्योतक तथा प्ररोह शिखाग्र विभज्योतक के स्तर पर विभज्योतक के बारे में पढ़ा है। ये पौधों की प्राथमिक वृद्धि के लिए जिम्मेदार होते हैं और मुख्यतया पौधे के अक्ष के समानांतर दीर्घीकरण में भागीदारी करते हैं। द्विबीज पत्ती तथा नग्नबीजी पौधों में पार्श्व विभज्योतक, संवहनी कैंबियम तथा कार्क कैंबियम जीवन में बाद में प्रकट होते हैं। ये विभज्योतक उन अंग की चौड़ाई को बढ़ाते हैं, जहाँ ये क्रियाशील होते हैं। इसे द्वितीयक वृद्धि के नाम से जाना जाता है (चित्र-15.2 देखें)।

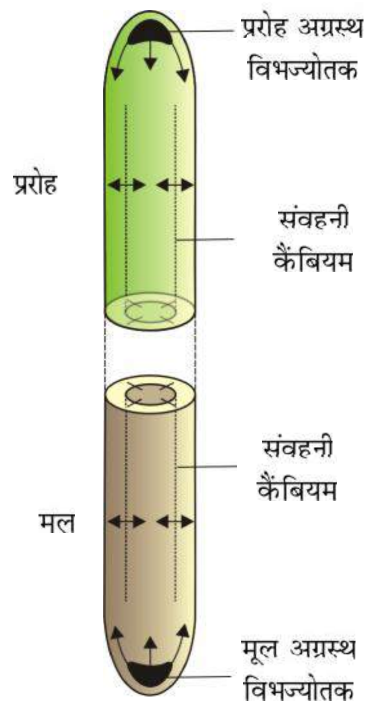

चित्र 15.2 मूल अग्रस्थ विभज्योतक, प्ररोह अग्रस्थ विभज्योतक तथा संवहनी कैंबियम का आरेख निरुपण। कोशिका और वृद्धि की दिशा को दिखाते हुए तीर।

15.1.2 वृद्धि माप योग्य है

कोशिकीय स्तर पर वृद्धि मुख्यत: जीवद्रव्य मात्रा में वृद्धि का परिणाम है। चूँकि जीवद्रव्य की वृद्धि को सीधे मापना कठिन है; अत: कुछ दूसरी मात्राओं को मापा जाता है जो कम या ज्यादा इसी के अनुपात में होता है। इसलिए, वृद्धि को विभिन्न मापदंडों द्वारा मापा जाता है। कुछेक मापदंड ये हैं: ताजी भार वृद्धि, शुष्क भार, लंबाई क्षेत्रफल, आयतन तथा कोशिकाओं की संख्या आदि। आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि एक मक्के की मूल शिखाग्र विभज्योतक में प्रति घंटे 17, 500 या अधिक नई कोशकाएं पैदा हो सकती हैं, जबकि एक तरबूज में कोशिकाओं की आकार में वृद्धि 3, 50, 000 गुना तक हो सकती है। पहले वाले उदाहरण में वृद्धि को कोशिकाओं की संख्या में वृद्धि के रूप व्यक्त किया गया है, जबकि बाद वाले में वृद्धि को कोशिका के आकार में बढ़ोत्तरी के रूप में किया गया है। एक पराग नलिका की वृद्धि, लंबाई में बढ़त का एक अच्छा मापदंड है, जबकि पृष्ठाधार पत्ती की वृद्धि को उसके पष्ठीय क्षेत्रफल की बढत के रूप में मापा जा सकता है।

15.1.3 वृद्धि के चरण

वृद्धि की अवधि को मुख्यत: तीन चरणों में बाँटा गया है; विभज्योतकीय, दीर्घीकरण एवं परिपक्वता (चित्र-15.3)। आओ, हम इसे मूलाग्र को देख कर समझें।

विभज्योतकीय चरण में कोशिकाएं मूल शिखाग्र तथा प्ररोह शिखाग्र दोनों में लगातार विभाजित होती हैं। इन क्षेत्रों की कोशिकाएं जीवद्रव्य से भरपूर होती हैं और व्यापक संलक्ष्य केंद्रक को अधिकृत किए होती हैं। उनकी कोशिका भित्ति प्राथमिक, पतली तथा प्रचुर जीवद्रव्य तंतु संयोजन के साथ सेललाजिक होती है। विभज्योतक क्षेत्र के समीपस्थ (ठीक

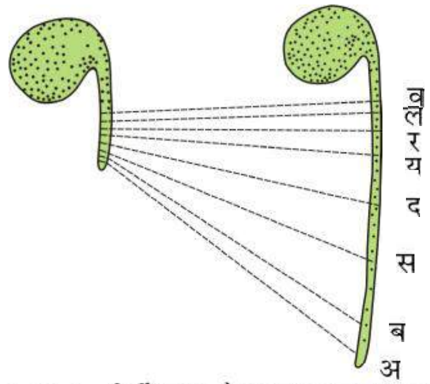

चित्र 15.3 दीर्घीकरण क्षेत्र का पहचान समानांतर रेखा तकनीक द्वारा। क्षेत्र अ, ब, स, द जो शीर्ष के पीछे हैं सबसे ज्यादा दीर्घीकत हुए हैं।

अगला, नोक से दूर) कोशिका दीर्घीकरण के चरण का प्रतिनिधित्व करता है। इस चरण में कोशिकाओं का बड़ा हुआ रसधानी भवन, कोशिका विशालीकरण तथा नव कोशिका भित्ति निक्षेपण आदि विशिष्टताएं हैं। पुनः शिखाग्र से आगे अर्थात् दीर्घीकरण के अधिक समीपस्थ अक्ष का वह भाग स्थित होता है जो कि परिपक्वता के चरण में जा रहा होता है। इस परिक्षेत्र में स्थित होने वाली कोशिकाएं अपने अंतिम आकार को प्राप्त किए होती हैं तथा उनकी भित्ति की मोटाई एवं रसधानी चरम पर होता है। अध्याय 6 में आपने अधिकतर जिन ऊतकों/कोशिकाओं के प्रकार का अध्ययन किया: वे इसी चरण का प्रतिनिधित्व करती है।

15.1.4 वृद्धि दर

समय की प्रति इकाई के दौरान बढ़ी हुई वृद्धि को वृद्धि दर कहा जाता है। अतः वृद्धि की दर को गणितीय ढंग से (चित्र 15.4) व्यक्त किया जा सकता है। एक जीव या उसके अंग कई तरीकों से अधिक कोशिकाएं पैदा कर सकता है।

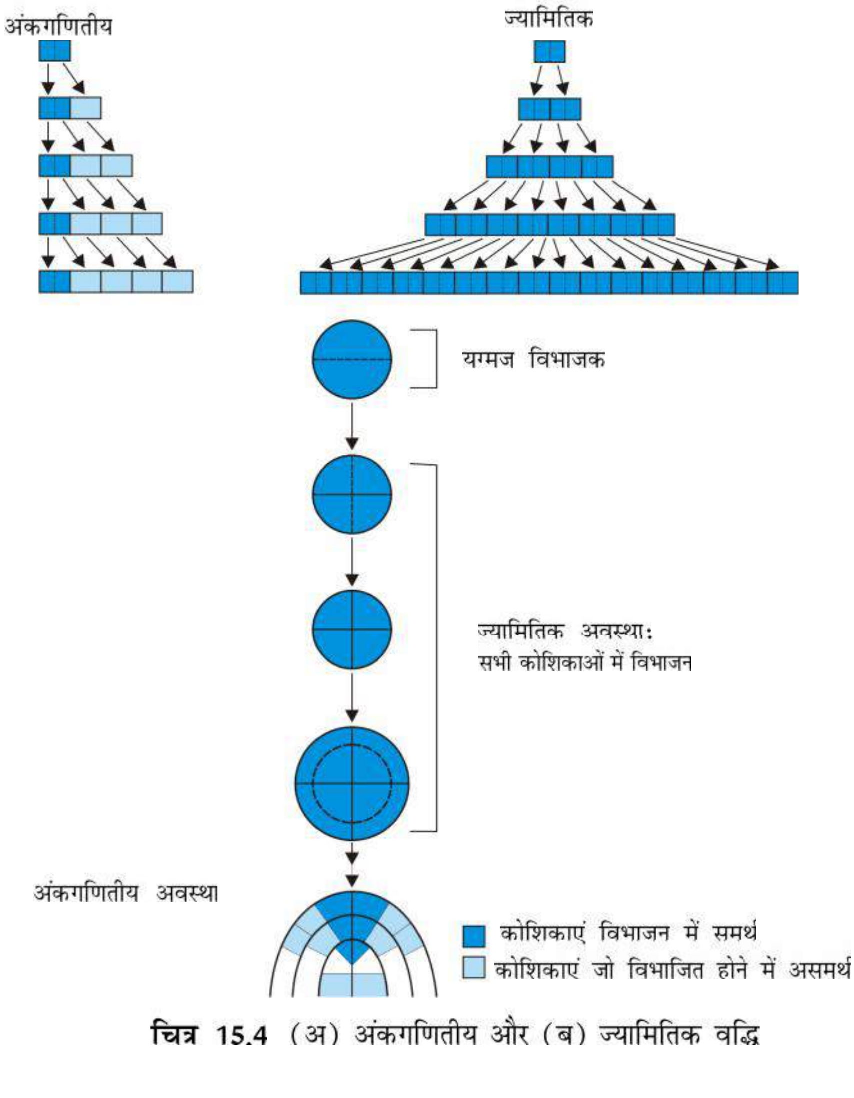

चित्र 15.4 (अ) अंकगणितीय और (ब) ज्यामितिक वृद्धि

वृद्धि दर अंकगणितीय या ज्यामितीय (रेखागणितीय) संवंर्धन हो सकती है। अंकगणितीय वृद्धि में, समसूत्री विभाजन के बाद केवल एक पुत्री कोशिका लगातार विभाजित होती रहती है तो जब कि दूसरी विभेदित एवं परिपक्व होती रहती हैं। अंकगणितिय वृद्धि एक सरलतम अभिव्यक्ति है जिसे हम निश्चित दर पर दीर्घीकृत होते मूल में देख सकते हैं। (चित्र 15.5) को देखें जिसमें अंग की लंबाई समय के विरूद्ध अलिखित की गई है जिसके फलस्वरूप रेखीय वक्र पाया गया है। इसे हम गणितीय रूप में इस प्रकार चक्र कर सकते हैं–

$L_t = L_O + rt$

L_t = टाइम टी के समय लंबाई

L_O = टाइम शून्य के समय लंबाई

r = वृद्धि दर दीर्घीकरण प्रति इकाई समय

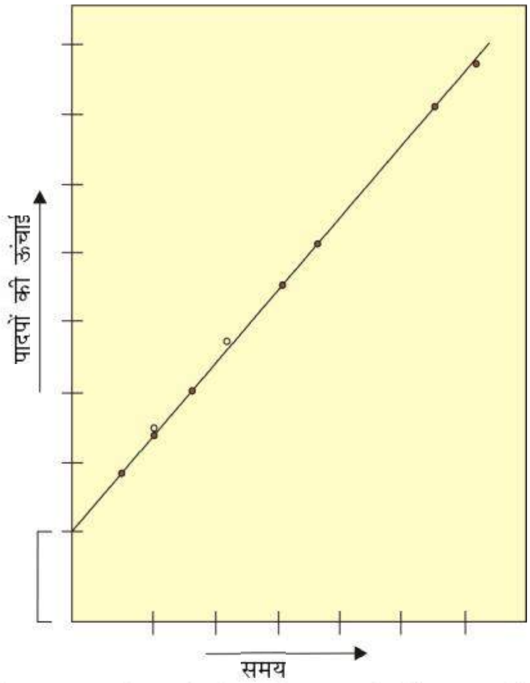

चित्र 15.5 नियत रेखीय वृद्धि. लंबाई और समय के विरूद्ध आलेख

आइए, अब देखें, ज्यामितीय वृद्धि में क्या होती है। हालाँकि अधिकतर प्रणालियों में प्रारंभिक वृद्धि (लैगफेस) धीमी होती है और यह इसके बाद तीव्र गति से एक चरघातांकी दर (लॉग या चरघातांकी चरण) में बढ़ती है। यहाँ पर दोनों संतति कोशिकाएं एक समसूत्री कोशिका के विभाजन का अनुकरण करती है तथा विभाजित होने पर लगातार ऐसा करते रहने के काबिलियत बनाएं रखती हैं। हालाँकि, सीमित पोषण आपूर्ति के साथ वृद्धि धीमी पड़ती हुई स्थिर चरण की ओर बढ़ जाती है। यदि हम समय के प्रति वृद्धि के मापदंड को नियोजित करते हैं तो हम एक विशिष्ट सिगमोइड या एस-वक्र पाते हैं (चित्र 15.6)। एस वक्र सभी जीवित प्राणियों की विशिष्टता है जो स्वाभाविक पर्यावरण में बढ़ रहे होते हैं। यह सभी कोशिकाओं, ऊतकों एवं एक पौधों के विशेष अंगों के लिए आदर्श है। *क्या आप अन्य ऐसे ही अधिक उदाहरणों के बारे में सोच सकते हैं? मौसमी क्रियाकलाप प्रकट करने वाले एक वृक्ष से आप किस तरह के वक्र की अपेक्षा कर सकते हैं?* चरघातांकीय वद्धि को इस प्रकार प्रकट किया जा सकता है:

$W_1 = W_0 \, e^{rt}$

W_1= अंतिम आकार (भार, ऊंचाई, संख्या आदि)

W_0= प्रथम आकार प्रारंभिक समय में

r = वृद्धि दर

t = समय में वृद्धि

e = स्वाभाविक लघुगाणिक का आधार

यहाँ r = एक सापेक्ष वृद्धि दर है, तथा साथ ही पौधे द्वारा नई पादप सामग्री को पैदा करने की क्षमता को मापने के लिए है.

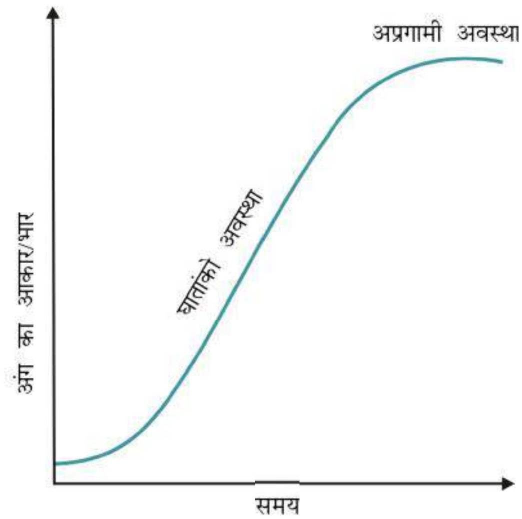

चित्र 15.6 एक आदर्श सिग्मायड वृद्धि वक्र, संवर्धित कोशिकाओं एवं उच्च पादपों और पादप अंगों के लिए प्रारुपिक

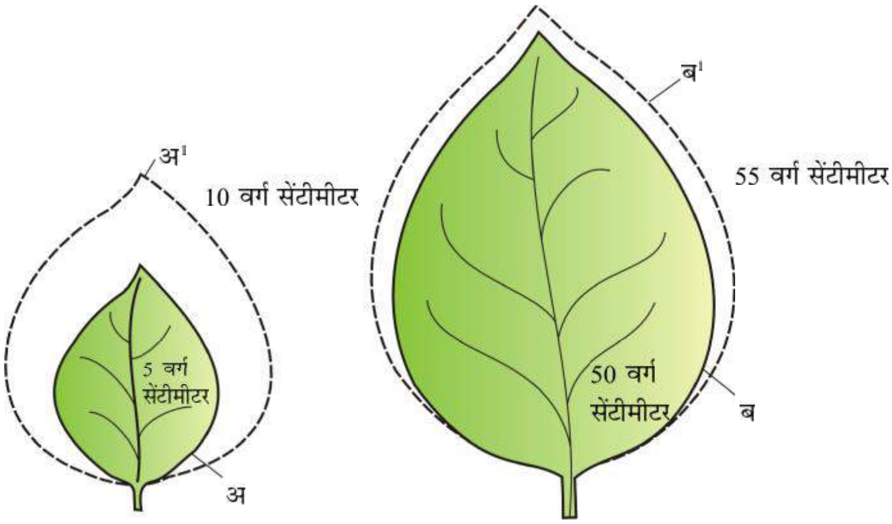

चित्र 15.7 निरपेक्ष और सापेक्ष वृद्धि दर (अ और ब पंक्तियों को देखें)। दोनों ने अपने क्षेत्रफल दिए हुए समय में अ 'अ' 'ब' ब पंक्तियां बनाने के लिए 5 से.मी.$^{-2}$ बढा लिए हैं।

जिसे एक दक्षता सूचकांक के रूप में संदर्भित किया जाता है। अत: W_1 का अंतिम आकार, W_0 के प्रारंभिक आकार पर निर्भर करता है।

जीवित प्रणाली की वृद्धि के बीच मात्रात्मक तुलना भी दो तरीकों से की जा सकती है: (I) मापन और प्रति यूनिट टाइम की कुल वृद्धि की तुलना, जिसे परम वृद्धि दर कहते हैं। (II) दी गई प्रणाली की प्रति यूनिट समय पर वृद्धि को सामान्य आधार पर प्रकट करना, उदाहरणार्थ- प्रति यूनिट प्रारंभिक मापदंड या पैमाइश को सापेक्षिक वृद्धि दर कहते हैं। देखें चित्र 15.7 जहाँ दो पत्तियां 'अ' और 'ब' विभिन्न आकारों की दिखाई गई है लेकिन एक दिए गए समय में उनके संपूर्ण क्षेत्रफल में वृद्धि समान है। फिर भी उनमें से एक की सापेक्षिक वद्धि दर ज्यादा है। यह कौन सी है और क्यों?

15.1.5 वद्धि के लिए दशाएं

आप यह लिखने की कोशिश क्यों नहीं करते कि पौधों की वृद्धि के लिए जरूरी चीजें क्या हैं? इस सूची में जल, ऑक्सीजन तथा पोषक तत्व अवश्य होने चाहिए जो वृद्धि के लिए अनिवार्य हैं। पौधों की कोशिकाएं अपने आकार में बड़ी होकर वृद्धि करती है जिसके लिए जल की आवश्यकता होती है। इसलिए एक पादप की वृद्धि और उसका परिवर्धन उसमें पानी की स्थिति या उपलब्धता से जुड़ी है। वृद्धि के लिए आवश्यक एंजाइमों की क्रियाशीलता के लिए जल एक माध्यम उपलब्ध करता है तथा ऑक्सीजन उपाचयी ऊर्जा को मुक्त करने में मदद करती है। पौधों द्वारा पोषकों (स्थूल एवं सूक्ष्म आवश्यक तत्व) की आवश्यकता जीवद्रव्य के संश्लेषण तथा ऊर्जा के स्रोत्र के रूप में काम करने के लिए होती है।

इसके अतिरिक्त प्रत्येक पादप जीव के लिए इष्टतम ताप परिसर होता है, जो उसकी वद्धि के लिए अत्यंत ही अनकल होता है। इस ताप के दायरे से किसी प्रकार का

विलगाव उसकी उत्तरजीविता के लिए हानिकारक हो सकता है। इसके साथ ही पर्यावरणीय संकेत जैसे कि प्रकाश एवं गरुत्वाकर्षण भी वद्धि की कछ अवस्थाओं या चरणों को प्रभावित करता है।

15.2 विभेदन, निर्विभेदन तथा पनर्विभेदन

मूल शिखाग्र विभज्योतक तथा प्ररोह शिखाग्र विभज्योतक से आने वाली कोशिकाएं और कैंबियम विभेदित होती है। तथा विशिष्ट क्रियाकलाप को संपन्न करने के लिए परिपक्व होती है। यह परिपक्वता की ओर अग्रसर होने वाली कार्यवाही **विभेदन** कहलाती है। वे अपनी कोशिकाभित्ति एवं जीवद्रव्य दोनों में ही या कुछ व्यापक संरचनात्मक बदलावों से गुजरती है। उदाहरणस्वरूप एक वाहिकीय तत्व के बनने में कोशिका अपने जीव द्रव्य को खो देती है और बाद में एक बहुत सुदृढ़ तन्यतापूर्ण लिग्नोसेल्युलोसिक (काष्ठ कोशिका सधानी) द्वितीय कोशिका भित्ति विकसित होती है, जो लंबी दूरी तक सर्वोच्च तनाव में भी जल को वहन करने के लिए उपर्युक्त होता है। आप पौधों के शरीर की विभिन्न रचनात्मक विशिष्टताओं एवं उसकी संबंधित क्रियाशीलता से संबंध स्थापित करने की कोशिश करें।

पौधे अन्य रोचक तथ्य दिखाते हैं। जीवित विभेदित कोशिकाएं कुछ *खास* परिस्थितियों में विभाजन की क्षमता पुनः प्राप्त कर सकती हैं। इस क्षमता को **निर्विभेदन** कहते हैं। उदाहरण के तौर पर अंतरापूलय वाहिकी कैंबियम, एवं कार्क कैंबियम। निर्विभेदित कोशिकाओं/ऊतकों के द्वारा उत्पादित कोशिका बाद में फिर से विभाजन की क्षमता खो देती है ताकि विशिष्ट कार्यों को संपादित किया जा सके अर्थात् **पुनर्विभेदित** हो जाती है। एक काष्ठीय द्विबीजपत्ती पादप के कुछ ऊतकों की सूची बनाएं जो पुनर्विभेदन के उत्पाद हों। आप अर्वुद का कैसे वर्णन करेंगे? आप उस मृदूतक कोशिका को जिसे प्रयोगशाला के नियंत्रित क्षेत्र में पादप ऊतक संवर्धन के दौरान विभाजित कराया जा रहा हो, उसे क्या कहेंगे?

अनुभाग 15.1.1 को याद कीजिए; हमने बताया था कि पौधों में वृद्धि उन्मुक्त होती है अर्थात् यह परिमित या अपरिमित हो सकता है। अब, हम कह सकते हैं कि पादपों में विभेदन भी उन्मुक्त होता है; क्योंकि ठीक उसी विभज्योतक से पैदा हुए ऊतक/कोशिकाएं परिपक्व होने पर भिन्न संरचनाएं तैयार करती हैं। कोशिका/ऊतक की परिपक्वता के समय अंतिम संरचना कोशिका के आंतरिक स्थान पर भी निर्भर करता है। उदाहरण के लिए शिखाग्र विभज्योतक से दूरस्थ कोशिकाएं मूल गोप कोशिका के रूप में विभेदित होती हैं जबकि जिन्हें बाहरी वलय की ओर ढकेल दिया जाता है। बाह्य त्वचा के रूप में परिपक्व होती हैं। क्या आप उन्मुक्त विभेदन का कुछ और उदाहरण जोड़ना चाहेंगे जो कोशिकीय स्थिति तथा पादप अंगों में उनके स्थान के संबंधों को दर्शाता हो?

15.3 परिवर्धन

परिवर्धन वह शब्द है जिसके अंतर्गत एक जीव के जीवन चक्र में आने वाले वे सारे बदलाव शामिल हैं, जो बीजांकरण एवं जरावस्था के बीच आते हैं। चित्र 15.8 में उच्च

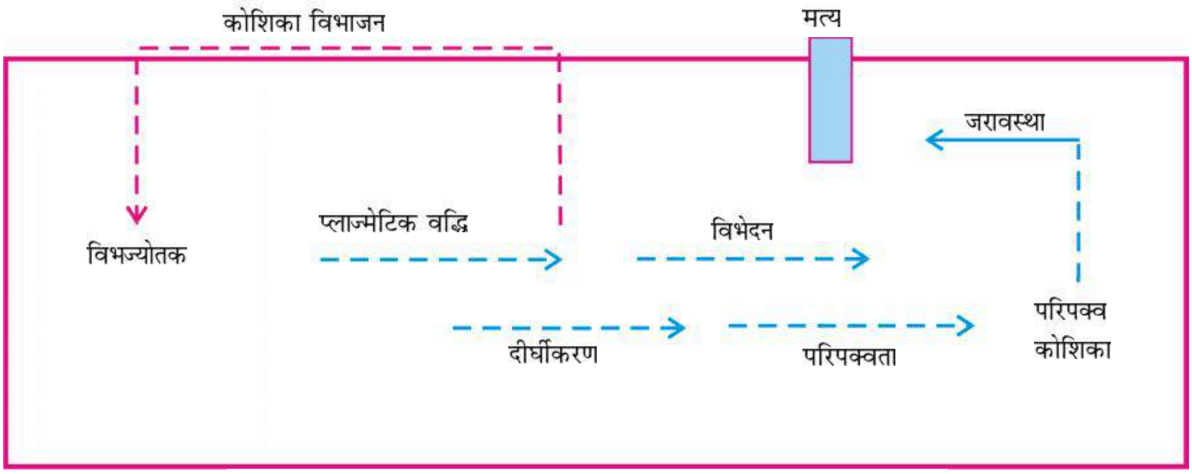

चित्र 15.8 एक पादप कोशिका के विकासात्मक प्रक्रम का अनक्रम

पादप की कोशिकाओं में होने वाले परिवर्धन की क्रमिक प्रतिक्रियाओं को रेखा चित्र के द्वारा प्रस्तुत किया गया है। यह ऊतकों/अवयवों (अंगों) पर भी लागू होता है।

पौधे पर्यावरण के प्रभाव के कारण या जीवन के विभिन्न चरणों में भिन्न पथों का अनुसरण करते हैं, ताकि विभिन्न तरह की संरचनाओं का गठन कर सकें। इस क्षमता को **प्लास्टिसिटी** कहते हैं। उदाहरण के तौर पर कपास, धनिया एवं लार्कस्पर में विभिन्न आकार की पत्तियाँ इन पौधों में पत्तियों का आकार किशोरावस्था एवं परिपक्व अवस्था में भिन्न होते हैं। दूसरी तरफ बटरकप में पत्तियों का आकार वायवीय भागों में अलग होता है (चित्र 15.9)। विषमपर्णता का यह दश्य प्लास्टिकता या सघटयता का एक उदाहरण है।

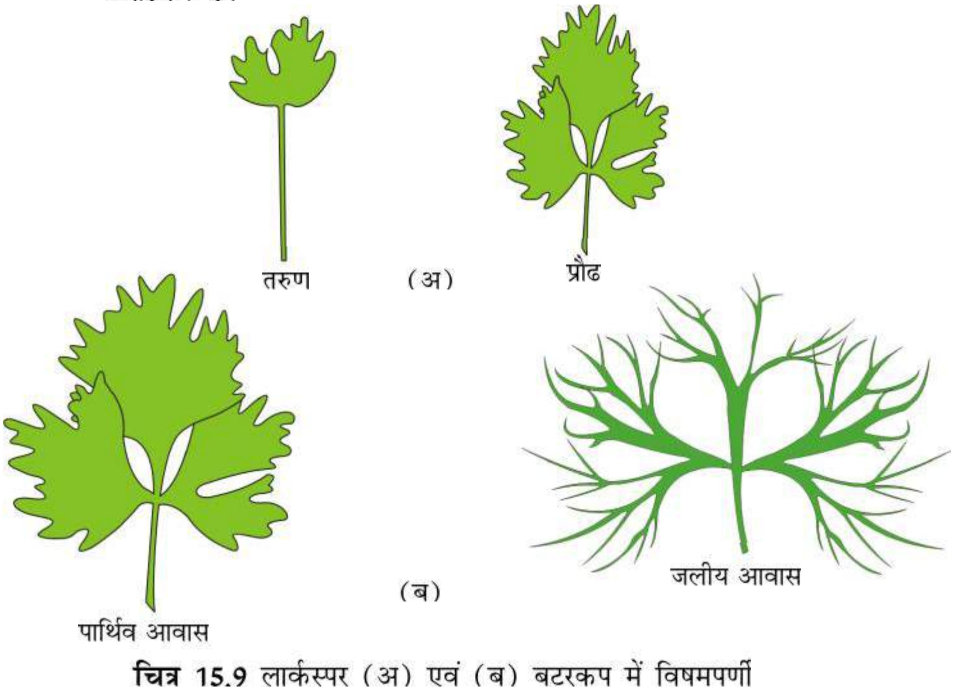

चित्र 15.9 लार्कस्पर (अ) एवं (ब) बटरकप में विषमपर्णी

अतः एक पौधे के जीवन में वृद्धि, विभेदन और परिवर्धन बहुत ही निकट संबंध रखने वाली घटनाएं हैं। व्यापक तौर पर परिवर्धन को वृद्धि एवं विभेदन के योग के रूप में माना जाता है। पौधों में परिवर्धन अर्थात् वृद्धि एवं विभेदन दोनों आंतरिक एवं बाह्य कारकों से नियंत्रित है। आंतरिक कारकों में अंतरकोशिकीय आनुवंशिक तथा अंतर कोशिकी कारक (जैसे की पादप वृद्धि नियामक रसायन) शामिल होते हैं, जबकि बाह्य कारकों के अंतगर्त प्रकाश. तापक्रम. जल. ऑक्सीजन तथा पोषक आदि शामिल होते हैं।

15.4 पादप वृद्धि नियामक

15.4.1 विशिष्टताएं

पादप वृद्धि नियामक विविध रासायनिक संघटनों वाले साधारण तथा लघु अणु होते हैं। ये इंडोल सम्मिश्रण (इंडोल-3 एसिटिक अम्ल, आई ए ए); ऐडनीन व्युत्पन्न फरफ्युराइल ऐमिनो प्युरीन काइनटिन) केराटिनायड तथा वसा अम्लों के व्युत्पन्नक (एंसीसिक एसिड, ए बी ए), टर्पीन (जिबेरेलिक एसिड, जी ए) या गैसेस (एथीलिन C_2H_4) आदि हो सकते हैं। पादप वृद्धि नियामक को पाठय सामग्री में. पादप वद्धि तत्व. पादप हार्मोन तथा फाइटोहार्मोन के नाम से वर्णित किया गया है।

पादप वृद्धि नियामक (पी जी आर) को व्यापक रूप से एक जीवित पौधे में उनकी कार्यशीलता के आधार पर दो समूहों में बाँटा जा सकता है। पीजीआर का एक समूह वृद्धि उन्नयन क्रियाकलापों में लगा होता है जैसे कि कोशिका विभाजन, कोशिका प्रसार, प्रतिमान संरचना, ट्रापिक (अनुवर्तनी) वृद्धि, पुष्पन, फलीकरण तथा बीज संरचना आदि। इन्हें पादप वृद्धि नियामक भी कहा जाता है जैसे कि ऑक्सिंस, जिब्बेरेलिंस तथा साइटोकिनिंस। उनके समूह के दूसरे पीजीआर तथा दवाब के प्रति पादपों की अनुक्रिया समूह के दूसरे पीजीआर में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इसके साथ ही वे विभिन्न वृद्धि वाधक कियाकलापों जैसे प्रसुप्ति एवं विलगन में भी शामिल होते हैं। एबसीसिक एसिड पीजीआर इसी समुह का सदस्य है। गैसीय पी जी आर, एथीलिन किसी भी समूह के साथ बैठ जाता है लेकिन व्यापक तौर पर यह एक वद्धि बाधक क्रिया कलापों में आता है।

15.4.2 पादप वद्धि नियामकों की खोज

रोचक बात यह है कि पीजीआर के पाँच प्रमुख समूहों में प्रत्येक की खोज मात्र एक संयोग है। इसकी शुरूआत चार्ल्स डारविन और उनके पुत्र फ्रांसिस डारविन के अवलोकन से हुई जब उन्होंने देखा कि कनारी घास का प्रांकुर चोल (कोलियोपटाइल) एकपार्श्वी प्रदीपन के प्रति अनुक्रिया करता है और प्रकाश के उद्गम की तरफ वृद्धि (प्रकाशानुवर्तन) करता है। प्रयोगों की एक लंबी श्रृंखला के पश्चात, यह निष्कर्ष निकाला गया कि प्रांकुर चोल की नोक संचारणीय प्रवाह की जगह है जो संपूर्ण प्रांकुर चोल के मडने का कारण है (चित्र 15.10)। ऑक्सिन की

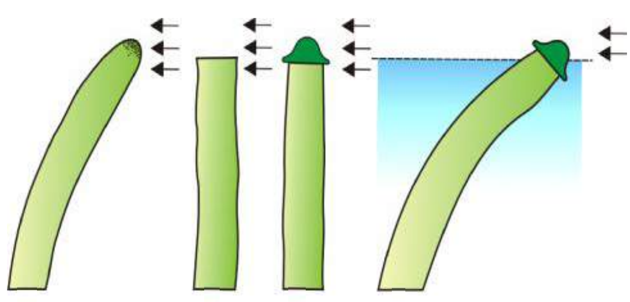

चित्र 15.10 प्रांकुर चोल का अग्रभाग पादप वद्धि नियामक ऑक्सीजन का उदगम

खोज एफ डवल्य वेंट (F.W. Went) के द्वारा जई के अंकर के प्रांकरचोल शिखर से की गई है।

'बैकेन' (फूलिश सीडलिंग) धान के पौध (नवोद्‌भिद्) की बीमारी है जो रोगजनक कवक जिबेरेला फूजीकोराइ के द्वारा होती है। ई. कुरोसोवा (जापानी वैज्ञानिक) ने रोगरहित धान की पौध में रोग लक्षण को बताया, जब उन्हें कवक के जीवाणुहीन निस्यंदों (फिल्ट्रेट) के साथ उपचारित किया। सक्रिय तत्व की पहचान बाद में जिब्बेरेलिक अम्ल के रूप में हुई।

एफ स्कूग (F. Skoog) तथा उनके सहकर्मियों ने देखा कि तंबाकू के तने के अंतरपर्व (इंट्रानोडल) खंड से (अविभेदित कोशिकाओं का समूह) तभी प्रचुरित हुआ जब ऑक्सिंस के अलावा मीडियम में, वाहिका ऊतकों के सत्व या यीस्ट सत्व या नारियल दूध या डीएनए पूरक रूप में दिया गया। स्कूग और मिलर ने साइटोकाइनेसिस को बढ़ावा देने वाले इस तत्व को पहचाना और इसका क्रिस्टलीकरण किया तथा काइनेटिन नाम दिया।

1960 के मध्य में तीन अलग-अलग वैज्ञानिकों ने स्वतंत्र रूप से तीन तरह के निरोधक का शुद्धिकरण एवं उसका रासायनिक स्वरूप प्रस्तुत किया। वे निरोधक बी, बिलगन II एवं डोरमिन है। बाद में ये तीनों रासायनिक रूप से समान पाए गए। इसका नामकरण एबसिसिक अम्ल के रूप में किया गया।

कौसइंस ने यह सुनिश्चित किया कि पके हुए संतरों से निकला हुआ एक वाष्पशील तत्व पास में रखे बिना पके हुए केलों को शीघ्रता में पकाता है। बाद में यह वाष्पशील तत्व एथीलिन के नाम से जाना गया जो एक गैसीय पीजीआर है। आइए, अब हम इन पाँच तरह के पीजीआर के कायिकीय प्रभाव का अगले भाग में अध्ययन करते हैं।

15.4.3 पादप वद्धि नियामकों का कायिकीय शरीरक्रियात्मक प्रभाव

15.4.3.1 ऑक्सिंस

(ग्रीक शब्द *आक्सेन* : बढ़ना) सर्वप्रथम मनुष्य के मूत्र से निकाला गया। शब्द ऑक्सिंस इनडोल-3 एसेटिक अम्ल (आई ए ए) तथा अन्य प्राकृतिक एवं कृत्रिम यौगिक, जिसमें वृद्धि करने की क्षमता हो, के लिए प्रयोग किया जाता है। ये प्रायः तने एवं मूल के बढ़ते हुए शिखर पर बनते हैं तथा वहाँ से क्रियाशीलता वाले भाग में जाता हैं। ऑक्सिंस जैसे आईएए एवं इनडोल ब्यूटेरिक अम्ल पौधे से निकाला गया है। एनएए (नैफथेलिन एसेटिक अम्ल) तथा 2, 4 डी (2,4 डाईक्लोरो फिनोक्सी एसेटिक अम्ल) कृत्रिम आक्सिंस हैं। ऑक्सिंस के उपयोग का एक विस्तृत दायरा है और ये बागवानी एवं खेती में प्रयोग किए गए हैं। ये तनों की कटिंग (कलमों) में जड़ फूटने (रूटिंग) में सहायता करती है जो पादप प्रवर्धन में व्यापकता से इस्तेमाल होती है। आक्सिंस पुष्पन को बढ़ा देती है; जैसे अनानास में। ये पौधों के पत्तों एवं फलों को शुरूआती अवस्था में गिरने से बचाते हैं तथा पुरानी एवं परिपक्व पत्तियों एवं फलों के विलगन को बढ़ावा देते हैं। उच्च पादपों में वृद्धि करती अग्रस्थ कलिका पार्श्व (कक्षस्थ) कलियों की वृद्धि को अवरोधित करते हैं। जिसे **शिखाग्र प्रधान्यता** (apical dominance) कहते हैं। प्रोह सिरों को हटाने (शिरच्छेदन)

से प्राय: पार्श्व कलियों की वृद्धि होती है (देखें चित्र 15.11)। यह बात व्यापक रूप से चाय रोपण एवं बाड़ बनाने (हेज मेकिंग) में लाग होती है। क्या आप बता सकते हैं, क्यों?

इसके साथ ही आक्सिंस अनिषेकफलन को प्रेरित करता है जैसे कि टमाटर में। इन्हें व्यापक रूप से शाकनाशी के रूप में उपयोग किया जाता है। 2, 4-डी, व्यापक रूप से द्विबीजपत्ती खरपतवारों का नाश कर देता है; लेकिन एकबीजपत्ती परिपक्व पौधों को प्रभावित नही करता है। इसका उपयोग मालियों के द्वारा लॉन को तैयार करने में किया जाता है। इसके साथ ही ऑक्सिंस जाइलम विभेदन को नियंत्रित करने तथा कोशिका के विभाजन में मदद करता है।

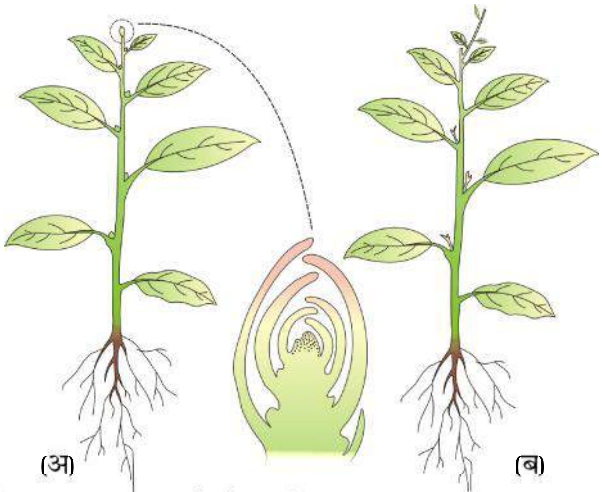

चित्र 15.11 पादपों में शीर्षस्थ प्रभाविता (अ) अग्रस्थ कलिका की उपस्थिति कक्षस्थ कलिका में वृद्धि को रोकती है (ब) अग्रस्थ कलिका का लंबवत काट, कक्षस्थ कलिका से छत्रक हटाने के बाद शाखाओं के रूप में वद्धि

15.4.3.2 जिब्बेरेलिंस

जिब्बेरेलिंस एक अन्य प्रकार का प्रोत्साहक पी जी आर है। सौ से अधिक जिब्बेरेलिंस की सूचना विभिन्न जीवों से आ चुकी है जैसे कि कवकों और उच्च पादपों से। इन्हें जी $ए_1$ (GA_1)जी $ए_2$ (GA_2)जी $ए_3$ (GA_3)और इसी तरह से नामित किया गया है। हालांकि जी $ए_3$ वह जिबेरलिंस है जिसकी सबसे पहले खोज की गई थी और अभी भी सभी से अधिक सघनता से अध्ययन किया जाने वाला स्वरूप है। सभी जी ए एस (GAs) अम्लीय होते हैं। ये पौधों में एक व्यापक दायरे की कायिकीय अनुक्रिया देते हैं। ये अक्ष की लंबाई बढ़ाने की क्षमता रखते हैं, अत: अंगूर के डंठल की लंबाई बढ़ाने मे प्रयोग किये जाते हैं। जिब्बेरेलिंस सेव जैसे फलों को लंबा बनाते हैं ताकि वे उचित रूप ले सकें। ये जरावस्था को भी रोकते हैं, ताकि फल पेड़ पर अधिक समय तक लगे रह सकें और बाजार में मिल सकें। जी $ए_3$ (GA_3) को आसव (शराब) उद्योग में माल्टिंग की गति बढ़ाने के लिए उपयोग किया जाता है। गन्ने के तने में कार्बोहाइड्रेट्स चीनी या शर्करा के रूप में एकत्र रहता है। गन्ने की खेती में जिब्बेरेलिंस छिड़कने पर तनों की लंबाई बढ़ती है। इससे 20 टन प्रति एकड़ ज्यादा उपज बढ़ जाती है। जी ए छिड़कने पर किशोर शंकुवृक्षों में परिपक्वता तीव्र गति से होती है अत: बीज जल्दी ही तैयार हो जाता है। जिब्बेरेलिंस चुकंदर, पत्तागोभी एवं अन्य रोजेटी स्वभाव वाले पादपों में वोल्टिंग (पष्पन से पहले अंत:पर्व का दीर्घीकरण) को बढा देता है।

15.4.3.3 साइटोकिनिंस

साइटोकिनिंस अपना विशेष प्रभाव साइटोकिनेसिस (कोशिकाद्रव्य विभाजन) में डालता है और इसे काइनेटिन(एडेनिन का रूपांतरित रूप एक प्युरीन) के रूप में आटोक्लेबड्र हेरिंग के शुक्राणु से खोजा गया था। काइनेटिन पौधों में प्राकृतिक रूप से नहीं पाया जाता है। साइटोकिनिन जैसे पदार्थों की खोज के क्रम में मक्का की अष्ठि तथा नारियल दध से

जियाटीन अलग किया जा सका। जियाटिन के खोज के बाद अनेकों प्राकृतिक रूप से प्राप्त साइटोकिनिंस तथा कोशिका विभाजन प्रोत्साहक पहचाने गए। प्राकृतिक साइटोकिनिंस उन क्षेत्रों में संश्लेषित होता है, जहाँ तीव्र कोशिका विभाजन संपन्न होता है, उदाहरण के लिए मूल शिखाग्र, विकासशील प्ररोह कलिकाएं तथा तरुणफल आदि। यह नई पत्तियों में हरितलवक पार्श्व प्ररोह वृद्धि तथा आपस्थानिक प्ररोह संरचना में मदद करता है। साइटोकिनिंस शिखाग्र प्राधान्यता से छुटकारा दिलाता है। वे पोषकों के संचारण को बढावा देते हैं जिससे पत्तियों की जरावस्था को देरी करने में मदद मिलती है।

15.4.3.4 एथीलिन

एथीलिन एक साधारण गैसीय पी जी आर है यह जरावस्था को प्राप्त होते ऊतकों तथा पकते हुए फलों के द्वारा भारी मात्रा में संश्लेषित की जाती है। एथीलिन पौधों की अनुप्रस्थ (क्षैतिज) वृद्धि, अक्षों में फुलाव एवं द्विबीजी निवेद्भिदों में अंकुश संरचना को प्रभावित करती है। एथीलिन जरावस्था एवं विलगन को मुख्यत: पत्तियों एवं फूलों में बढ़ाती है। यह फलों को पकाने में बहुत प्रभावी है। फलों के पकने के दौरान यह श्वसन की गति की वृद्धि करता है। श्वसन वद्धि में गति की इस बढत को क्लाइमैक्टिक श्वसन कहते हैं।

एथीलिन बीज तथा कलिका प्रसुप्ति को तोड़ती है, मूंगफली के बीज में अंकुरण को शुरू करती है तथा आलू के कंदों को अंकुरित करती है। एथीलिन गहरे पानी के धान के पौधों में पर्णवृंत को तीव्र दीर्घीकरण के लिए प्रोत्साहित करता है। यह पत्तियों तथा प्ररोह के ऊपरी भाग को पानी से ऊपर रखने में मदद करता है। इसके साथ ही एथीलिन मूल वृद्धि तथा मूल रोमों को प्रोत्साहित करती है: अत: पौधे को अधिक अवशोषण क्षेत्र प्रदान करने में मदद करती है।

एथीलिन अनानास को फूलने तथा फल समकालिकता में सहायता करता है। इसके साथ ही आम को पुष्पित होने में प्रेरित करता है। एथीलिन अनेकानेक कार्यिकी प्रक्रियाओं को नियमित करता है, अत: यह कृषि में सर्वाधिक इस्तेमाल होने वाली पी जी आर है। सर्वाधिक व्यापक तौर पर इस्तेमाल होने वाला यौगिक एथिफॉन है। एथिफॉन जलीय घोल में आसानी से अवशोषित तथा पौधे के अंतर्गत संचारित होता है तथा धीरे-धीरे एथीलिन मुक्त करता है। एथिफॉन टमाटर एवं सेव के फलों के पकाने की गति को बढ़ाता है तथा फूलों एवं फलों में विलगन को तीव्रता प्रदान करता है (कपास, चेरी तथा अखरोट में विरलन)। यह खीरों में मादा पष्पों का बढाता है जिससे फसल की पैदावार में वद्धि होती है।

15.4.3.5 एबसिसिक एसिड

जैसा कि पहले बताया जा चुका है कि एबसिसिक एसिड (ABA); की खोज विलगन एवं प्रसुप्ति को नियामित करने में उसकी भूमिका के लिए हुई थी। लेकिन अन्य दूसरे पी जी आर की भांति यह भी पादप वृद्धि एवं परिवर्धन में व्यापक दायरे में प्रभाव डालता है। यह एक सामान्य पादप वद्धि तथा पादप उपापचय के निरोधक का काम करता है।

ए बी ए बीज के अंकुरण का निरोध करता है। यह बाह्यत्वचीय पट्टिकाओं में रंध्रों के बंद होने को प्रोत्साहित करता है तथा पौधों को विभिन्न प्रकार के तनावों को सहने हेतु क्षमता प्रदान करता है। इसी कारण इसे तनाव हार्मोन भी कहा जाता है। ए बी ए बीज के विकास, परिपक्वता, प्रसुप्ति आदि में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। प्रसुप्ति को प्रेरित करने के द्वारा ए बी ए बीज को जल शुष्कन तथा वृद्धि के लिए अन्य प्रतिकूल परिस्थिति से बचाव देता है। बहुत सारी परिस्थतियों में. एबीए. जीएएस (GAs) के लिए एक विरोधक की भूमिका निभाता है।

हम संक्षेप में कह सकते हैं कि पादपों की वृद्धि, विभेदन तथा परिवर्धन के लिए एक या कई अन्य पी जी आर कुछ न कुछ भूमिका निभाते हैं। यह भूमिकाएं संपूरक की या फिर विरोधक की भी हो सकती है। ये भूमिकाएं वैयक्तिक (निजी) या योगवाही हो सकती हैं। इसी तरह पौधे के जीवन में कई घटनाएं होती हैं जहाँ एक से ज्यादा पीजीआर मिलकर घटनाओं को प्रभावित करती हैं, उदाहरण के तौर पर बीज या कली का प्रसप्तीकरण, विलगन, जरावस्था, शिखर प्रभुत्व आदि।

पीजीआर की भूमिका एक तरह के आंतरिक नियंत्रण में है। याद करें, जीनोमिक नियंत्रण एवं बाह्य कारक के साथ ये पौधे की वृद्धि एवं परिवर्धन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। बहुत सारे वाह्य कारक जैसे कि तापक्रम एवं प्रकाश पौधे की वृद्धि एव परिवर्धन को पीजीआर के माध्यम से नियंत्रण करते हैं। ऐसी कुछ घटनाओं का उदाहरण हैं: वसंतीकरण पुष्पन, प्रसुप्तीकरण, बीज अंकुरण, पौधों में गति आदि।

हम लोग संक्षेप में प्रकाश और ताप (दोनों बाह्य कारक है) के पष्पन आरंभ करने की भमिका को पढ़ेंगे।

15.5 दीप्तिकालिता

ऐसा देखा गया है कि कुछ पौधों में पुष्पन को प्रेरित/प्रवृत करने में प्रकाश की नियतकालिकता की आवश्यकता होती है। ऐसे पौधे प्रकाश की नियतकालिकता की अवधि को माप सकते हैं, उदाहरण स्वरूप : कुछ पौधों में क्रांतिक अवधि से ज्यादा प्रकाश की अवधि चाहिए, जबकि दूसरे पोधों में प्रकाश की अवधि संकट क्रांतिक अवधि से कम चाहिए, जिससे कि दोनों तरह के पौधों में पुष्पन की शुरूआत हो सके। प्रथम तरह के पौधों के समूह को **अल्प प्रदीप्तकाली पौधा** कहते हैं तथा बाद वाले पौधों को **दीर्घ प्रदीप्तकाली पौधा** कहते हैं। बहुत सारे ऐसे पौधे होते हैं, जिसमें प्रकाश की अवधि एवं पुष्पन प्रेरित करने में कोई संबंध नहीं होता है। ऐसे पौधों को **तटस्थ प्रदीप्तकाली** पौधा कहते हैं (चित्र 15.12)। यह भी ज्ञातव्य है कि सिर्फ प्रकाश की अवधि ही नहीं; बल्कि अंधकार की अवधि भी महत्वपूर्ण है। अत: कुछ पौधों में पुष्पन सिर्फ प्रकाश और अंधकार के अवधि पर ही निर्भर नहीं करता, बल्कि उसकी सापेक्षित अवधि पर निर्भर करता है। इस घटना को **दीप्तिकालिता** कहते हैं। यह भी बहुत मजेदार बात है कि तने की शीर्षस्थ कलिका पुष्पन के पहले पुष्पन शीर्षस्थ कलिका में बदलती है, परंतु वे (तने की शीर्षस्थ कलिका) खद से प्रकाश काल को नहीं महसस कर पाती है। प्रकाश/अंधकार

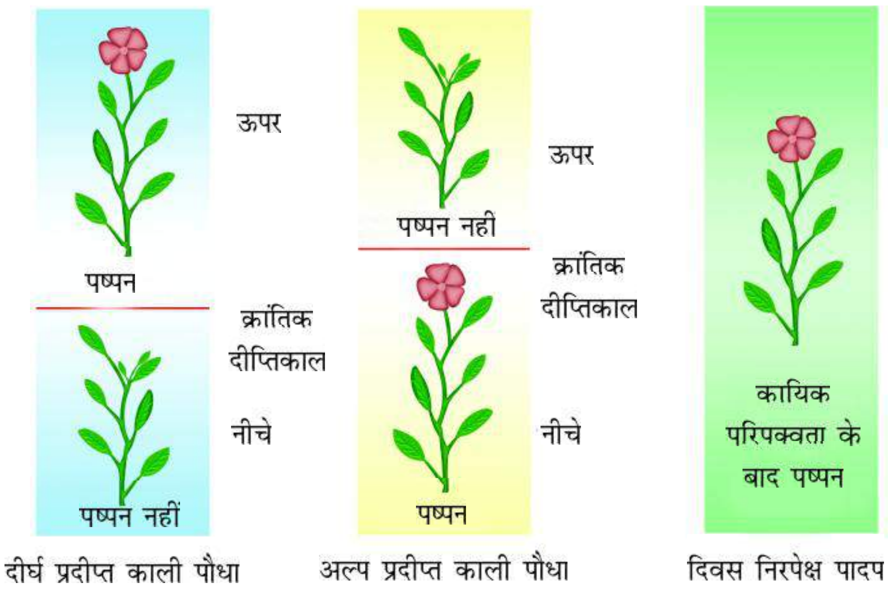

चित्र 15.12 दीप्तिकालिता – दीर्घ प्रदीप्त काली. अल्प प्रदीप्त काली एवं दिवस निरपेक्ष पादप

काल का अनुभव पत्तियां करती हैं। परिकल्पना यह है कि हार्मोनल तत्व (फ्लोरिजन) पुष्पन के लिए जिम्मेदार है। फ्लोरिजन पत्ती से तना कलिका में पुष्पन प्रेरित करने के लिए तभी जाती है जब पौधे आवश्यक प्रेरित दीप्तिकाल में अनावत होते हैं।

15.6 वसंतीकरण

कुछ पौधों में पुष्पन गुणात्मक या मात्रात्मक तौर पर कम तापक्रम में अनावृत होने पर निर्भर करता है। इसे ही **वसंतीकरण** कहा जाता है। यह अकालिक प्रजनन परिवर्धन को वृद्धि के मौसम में तब तक रोकता है जब तक पौधे परिपक्व न हो जाएं। वसंतीकरण कम ताप काल में पुष्पन के प्रोत्साहन को कहते हैं। उदाहरण के तौर पर भोजन वाले पौधे गेहूँ, जौ, तथा राई की दो किस्में होती हैं: जाड़े तथा वसंत की किस्में। वसंत की किस्में साधारणतया वसंत में बोई जाती है, जो बढ़ते मौसम की समाप्ति के पहले फूलती एवं फलती हैं। जाड़े की किस्में यदि वसंत में बोई जाती हैं तो वह मौसम के पहले न तो पुष्पित होती हैं और न फलती है। इसीलिए वह शरदकाल में बोई जाती हैं। ये अंकुरित होते हैं और नवोद्भिदों के रूप में जाड़े को बिताते हैं. फिर बसंत में फलते एवं फलते हैं तथा मध्य ग्रीष्म के दौरान काट लिए जाते हैं।

वसंतीकरण के कुछ उदाहरण द्विवर्षी पौधों में भी पाए जाते हैं। द्विवर्षी पौधे एक सकृत्फली पौधे होते हैं जो साधारणतया दूसरे मौसम/ऋतु में फूलते एवं मरते हैं। चुकंदर, पत्ता गोभी, गाजर कुछ द्विवर्षी पौधे हैं। एक द्विवर्षी पौधे को कम तापक्रम में अनावृत कर दिए जाने पर: पादपों में बाद में दीप्तिकालिता के कारण पष्पन की अनक्रिया बढ जाती है।[5]

सारांश

किसी भी जीवित प्राणी के लिए वृद्धि एक अत्यंत उत्कृष्ट घटना है। यह एक अनपलट, बढ़तयुक्त तथा मापदंड में प्रकट होने वाली है जैसे कि आकार, क्षेत्रफल, लंबाई, ऊंचाई, आयतन, कोशिका संख्या आदि। इसमें बढ़ा हुआ जीव द्रव्य पदार्थ शामिल है। पौधों में विभज्योतक/मेरिस्टेम वृद्धि की जगहें होती हैं। मूलशिखाग्र विभज्योतक तथा प्ररोह शिखाग्र विभज्योतक के साथ-साथ कई बार, अंतरवाहिका विभज्योतक पौधे के अक्ष की दीर्घगामी वृद्धि में भागीदारी करते हैं। उच्च पेड़ों में वृद्धि अनियत होती है। मूल शिखाग्र एवं प्ररोह शिखाग्र में कोशिका विभाजन का अनुपालन करते हुए वृद्धि अंकगणितीय या ज्यामितीय हो सकती है। कोशिका/ऊतक/अंग जीवों में वृद्धि दर सामान्यत: पूरे जीवन काल में उच्च दर पर नहीं टिकी रहती है। वृद्धि को तीन प्रमुख चरणों, लैग, लॉग तथा जरावस्था में बाँटा जा सकता है। जब कोशिका अपनी विभाजन क्षमता खो देती है तो यह विभेदन की ओर बढ़ जाती है। विभेदन संरचनाएं प्रदान करता है जो उत्पाद की क्रियात्मकता के साथ जुड़ी होती है। कोशिकाओं, ऊतकों तथा संबंधी अंगों के लिए विभेदन के लिए सामान्य नियम एक समान होते हैं। एक विभेदित कोशिका फिर विभेदित हो सकती है या फिर पुन:विभेदित हो सकती है। पादपों में विभेदन चूँकि खुला होता है. अत: परिवर्धन लचीला हो सकता है। दसरे शब्दों में है परिवर्धन वद्धि एवं विभेदन का योग है।

पादप वृद्धि एवं परिवर्धन बाह्य एवं आंतरिक दोनों कारकों द्वारा नियंत्रित होते हैं। अंतरकोशीय आंतरिक कारक रासायनिक तत्व होते हैं जिन्हें पादप वृद्धि नियामक (पीजीआर) कहा जाता है। पौधों में पीजीआर के विभिन्न समूह होते हैं, जो मुख्यत: पाँच समूह के नाम से जाने जाते हैं: आक्सिन, जिब्बेरेलिंस, साइटोकिनिंस, एबसीसिक एसिड तथा एथीलिन। ये पीजीआर पौधे के विभिन्न हिस्सों में उत्पादित किए जाते हैं। ये विभिन्न विभेदन एवं परिवर्धन की घटनाओं को नियंत्रित करते हैं। कोई भी पीजीआर पादपों के कार्यिकी पर प्रभाव डाल सकता है। ठीक इसी प्रकार से ये प्रभाव विविध प्रकार की पीजीआर से प्रकट होते हैं। ये पीजीआर सहक्रियाशील योगवाही अथवा प्रतिरोधात्मक के रूप में कार्य कर सकते हैं। इसके साथ पादप वृद्धि एवं परिवर्धन प्रकाश. तापक्रम. ऑक्सीजन स्तर. गरुत्व तथा अन्य ऐसे ही बाहरी घटकों द्वारा भी प्रभावित होते हैं।

कुछ पादपों में पुष्पन दीप्तिकालिता पर निर्भर करता है। दीप्तिकालिता के आधार पर पौधों को तीन भागों में बाँटा गया है– अल्प प्रदीप्तकाली पौधे, दीर्घ प्रदीप्तकाली पौधे एवं तटस्थप्रदीप्त काली पौधे। कुछ पौधों को कम ताप से अनावत करने की जरूरत होती है. ताकि वे जीवन के अंत में पष्पन कर सकें। इसे ही वसंतीकरण कहते हैं।

अभ्यास

1. वृद्धि, विभेदन. परिवर्धन. निर्विभेदन. पनर्विभेदन. सीमित वद्धि. मेरिस्टेम तथा वद्धि दर की परिभाषा दें।
2. पुष्पित पौधों के जीवन में किसी एक प्राचालिक (Parameter) से वद्धि को वर्णित नहीं किया जा सकता है. क्यों?

3. संक्षिप्त वर्णित करें–
   (अ) अंकगणितीय वृद्धि
   (ब) ज्यामितीय वृद्धि
   (स) सिग्माइड वृद्धि वक्र
   (द) संपर्ण एवं सापेक्ष वद्धि दर
4. प्राकृतिक पादप वृद्धि नियामकों के पाँच मुख्य समूहों के बारे में लिखें। इनके आविष्कार. कार्यिकी प्रभाव तथा कषि/बागवानी में इनका प्रयोग के बारे में लिखें।
5. दीप्तिकालिता तथा वसंतीकरण क्या हैं? इनके महत्व का वर्णन करें।
6. एबसिसिक एसिड को तनाव हार्मोन कहते हैं. क्यों?
7. उच्च पादपों में वद्धि एवं विभेदन खुला होता है. टिप्पणी करें?
8. अल्प प्रदीप्तकाली पौधे और दीर्घ प्रदीप्तकाली पौधे किसी एक स्थान पर साथ-साथ फलते हैं। विस्तत व्याख्या करें।
9. अगर आपको ऐसा करने को कहा जाए तो एक पादप वद्धि नियामक का नाम दें–
   (क) किसी टहनी में जड़ पैदा करने हेत
   (ख) फल को जल्दी पकाने हेतु
   (ग) पत्तियों की जरावस्था को रोकने हेतु
   (घ) कक्षस्थ कलिकाओं में वृद्धि कराने हेत
   (ङ) एक रोजेट पौधे में 'वोल्ट' हेतु
   (च) पत्तियों के रंध्र को तरंत बंद करने हेतु
10. क्या एक पर्णरहित पादप दीप्तिकलिता के चक्र से अनक्रिया कर सकता है? यदि हां या नहीं तो क्यों?
11. क्या हो सकता है. *अगर:*
   (क) जी $ए_3$ (GA_3) को धान के नवोद्‌भिदों पर दिया जाए
   (ख) विभाजित कोशिका विभेदन करना बंद कर दें
   (ग) एक सड़ा फल कच्चे फलों के साथ मिला दिया जाए।
   (घ) अगर आप संवर्धन माध्यम में साइटोकीनिंस डालना भल जाएं।

इकाई पाँच

मानव शरीर विज्ञान

अध्याय 16
पाचन एवं अवशोषण

अध्याय 17
श्वसन और गैसों का विनिमय

अध्याय 18
शरीर द्रव्य तथा परिसंचरण

अध्याय 19
उत्सर्जी उत्पाद एवं उनका निष्कासन

अध्याय 20
गमन एवं संचलन

अध्याय 21
तंत्रकीय नियंत्रण एवं समन्वय

अध्याय 22
रासायनिक समन्वय तथा एकीकरण

न्युनीकरणकर्ता जीवन के स्वरूपों के अध्ययन का उपागम करते हैं, परिणामस्वरूप भौतिक-रसायन संकल्पना एवं तकनीकी के उपयोग में वृद्धि होती है। ऐसे अध्ययनों मे बहुतायत से या तो जीवद्-ऊतक मॉडल का उपयोग करते हैं या फिर सीधे-सीधे कोशिकामुक्त प्रणाली का उपयोग करते हैं। एक ज्ञान की अभिवृद्धि के परिणामस्वरूप आण्विक जीव विज्ञान का जन्म हुआ। आज जैव-रसायनशास्त्र एवं जैव-भौतिकी के साथ आण्विक शरीर विज्ञान लगभग पर्यायवाची बन चुका है। हालांकि, अब तीव्र वृद्धि के साथ यह महसूस किया जा रहा है कि न तो शुद्ध रूप से जैविक उपागम और न ही शुद्ध रूप से न्यूनीकरण आण्विक उपागम जैव वैज्ञानिक प्रक्रम या जीवित प्रत्याभासों के सत्य को उद्घाटित कर पाएगा। वर्गिकी जीव विज्ञान हमें यह विश्वास दिलाता है कि सभी जैविक प्रत्याभास अध्ययन के अंतर्गत सभी कारकों की परस्पर क्रिया के कारण निर्गत विशिष्टाएं या गुणधर्म है। अणुओं का नियामक नेटवर्क, सुप्रा आण्विक जनसंख्या एवं समुदाय हर एक निर्गत गुणधर्म को पैदा करते हैं। इस खंड के अंतर्गत आने वाले अध्यायों में प्रमुख मानव शरीर वैज्ञानिक प्रक्रमों, जैसे पाचन, गैसों का विनिमय, रक्त परिसंचरण, गमन एवं संचलन के बारे मे कोशिकीय एवं आण्विक भाषा में वर्णन किया गया है। अंतिम दो अध्यायों के अंतर्गत जैविक समन्वय के बिंदओं पर चर्चा की गई है।

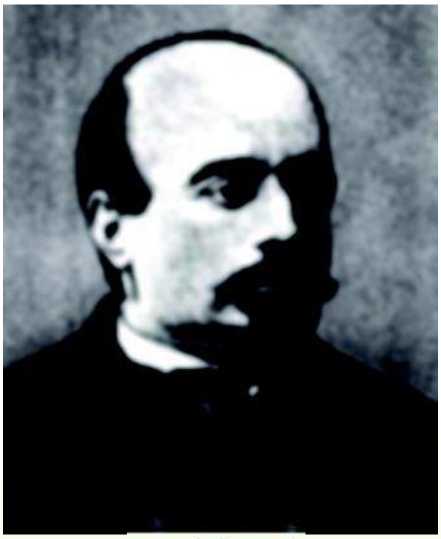

अलफोन्सो कार्टी
(1822 - 1888)

इटैलियन शरीर क्रिया वैज्ञानिक अलफोन्सो कोर्टी का जन्म 1822 में हुआ था। कोर्टी ने अपना वैज्ञानिक जीवन सरीसृपों के हृद-वाहिका तंत्र के अध्ययन से प्रारंभ किया था। बाद में उन्होंने अपना ध्यान स्तनधारियों के श्वसन-तंत्र की ओर केंद्रित किया था। सन् 1951 में आपने एक लेख प्रकाशित किया, जिसमें आपने कर्णावर्त (कॉक्लिया) की आधारस्थ झिल्ली पर स्थित संरचना में समाहित रोम कोशिकाओं की व्याख्या की थी जोकि ध्वनि कंपनों को तंत्रकीय आवेगों में परिवर्तित कर देती हैं। जिन्हें कोर्टी का अंग कहा गया। आपका देहांत वर्ष 1888 में हो गया।

अध्याय 16

पाचन एवं अवशोषण

16.1 पाचन तंत्र
16.2 भोजन का पाचन
16.3 पाचित उत्पादों का अवशोषण
16.4 पाचन तंत्र के विकार और अनियमितताए

भोजन सभी सजीवों की मूलभूत आवश्यकताओं में से एक है। हमारे भोजन के मुख्य अवयव कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन एवं वसा हैं। अल्प मात्रा में विटामिन एवं खनिज लवणों की भी आवश्यकता होती है। भोजन से ऊर्जा एवं कई कच्चे कायिक पदार्थ प्राप्त होते हैं जो वृद्धि एवं ऊतकों के मरम्मत के काम आते हैं। जो जल हम ग्रहण करते हैं, वह उपापचयी प्रक्रियाओं में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है एवं शरीर के निर्जलीकरण को भी रोकता है। हमारा शरीर भोजन में उपलब्ध जैव-रसायनों को उनके मूल रूप में उपयोग नहीं कर सकता। अतः पाचन तंत्र में छोटे अणुओं में विभाजित कर साधारण पदार्थों में परिवर्तित किया जाता है। जटिल पोषक पदार्थों को अवशोषण योग्य सरल रूप में परिवर्तित करने की इसी क्रिया को **पाचन** कहते हैं और हमारा पाचन तंत्र इसे यॉंत्रिक एवं रासायनिक विधियों द्वारा संपन्न करता है। मनष्य का पाचन तंत्र चित्र 16.1 में दर्शाया गया है।

16.1 पाचन तंत्र

मनष्य का पाचन तंत्र आहार नाल एवं सहायक ग्रंथियों से मिलकर बना होता है।

16.1.1 आहार नाल

आहार नाल अग्र भाग में मख से प्रारंभ होकर पश्च भाग में स्थित गदा द्वारा बाहर की ओर खलती है।

मुख, मुखगुहा में खुलता है। मुखगुहा में कई दांत और एक पेशीय जिह्वा होती है। प्रत्येक दांत जबडे में बने एक सांचे में स्थित होता है। (चित्र 16.2) इस तरह की व्यवस्था को ***गर्तदंती*** (thecodont) कहते हैं। मनुष्य सहित अधिकांश स्तनधारियों के जीवन काल में दो तरह के दांत आते हैं- अस्थायी दांत-समूह अथवा दूध के दांत जो वयस्कों में स्थायी दांतों से प्रतिस्थापित हो जाते हैं। इस तरह की दांत (दंत) व्यवस्था को **द्विबारदंती**

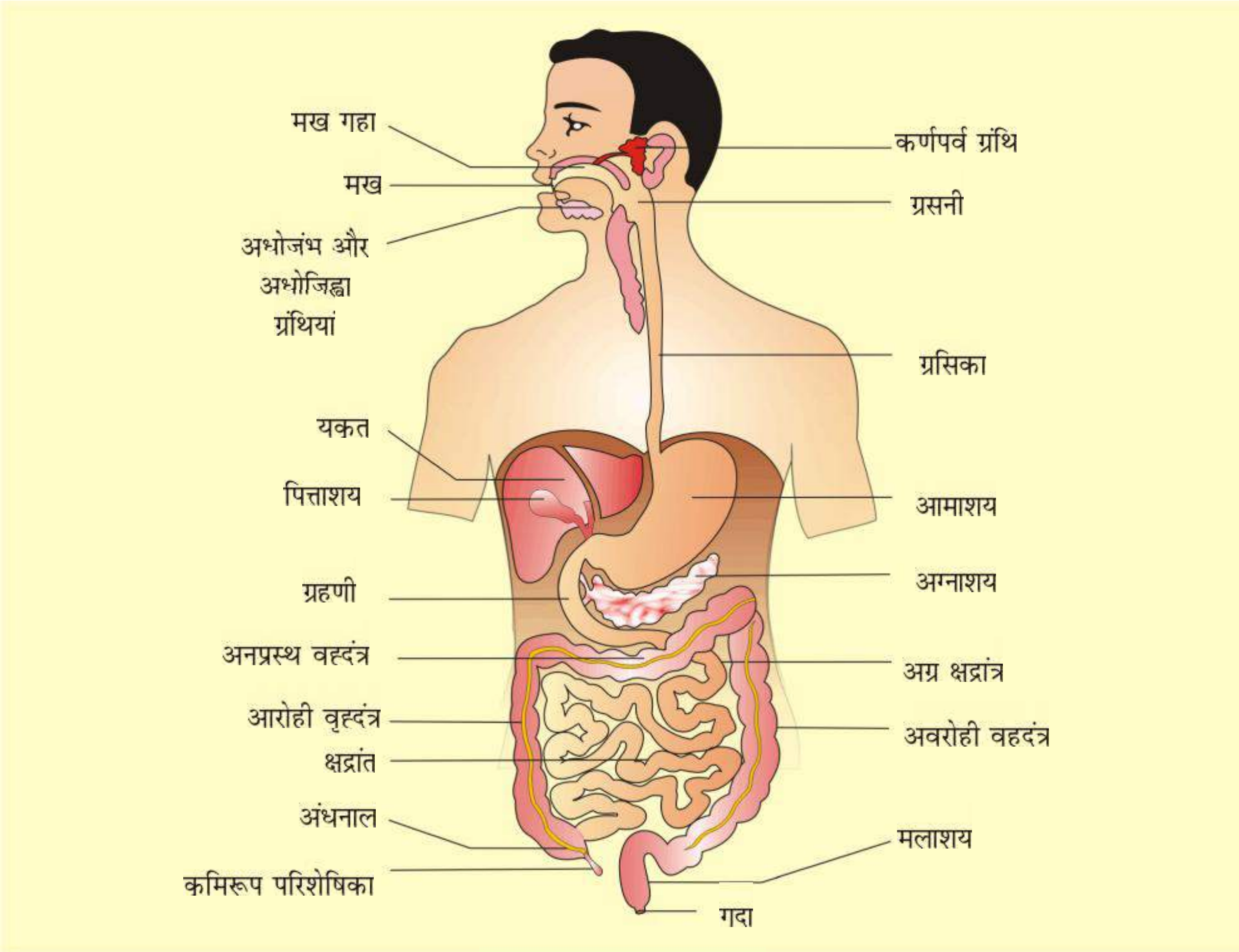

चित्र 16.1 मानव पाचन तंत्र

(Diphyodont) कहते हैं। वयस्क मनुष्य में 32 स्थायी दांत होते हैं, जिनके चार प्रकार हैं जैसे- कृंतक (I), रदनक (C) अग्र-चर्वणक (PM) और चर्वणक (M)। ऊपरी एवं निचले जबडे के प्रत्येक आधे भाग में दांतों की व्यवस्था I, C, PM, M क्रम में एक दंतसत्र के अनसार होती है जो मनष्य के लिए $\frac{2123}{2123}$ है। इनैमल से बनी दांतों की चबाने वाली कठोर सतह भोजन को चबाने में मदद करती है। जिह्वा स्वतंत्र रूप से घूमने योग्य एक पेशीय अंग है जो फ्रेनुलम (frenulum) द्वारा मुखगुहा की आधार से जुड़ी होती है। जिह्वा की ऊपरी सतह पर छोटे-छोटे उभार के रूप में पिप्पल (पैपिला) होते हैं. जिनमें कछ पर स्वाद कलिकाएं होती हैं।

मुखगुहा एक छोटी ग्रसनी में खुलती है जो वायु एवं भोजन, दोनों का ही पथ है। उपास्थिमय घाँटी ढक्कन. भोजन को निगलते समय श्वासनली में प्रवेश करने से रोकती है। ग्रसिका (oesophagus) एक पतली लंबी नली है, जो गर्दन, वक्ष एवं मध्यपट से होते हए पश्च भाग में 'J' आकार के थैलीनमा आमाशय में खलती है। ग्रसिका का आमाशय

में खुलना एक पेशीय (आमाशय-ग्रसिका) अवरोधिनी द्वारा नियंत्रित होता है। आमाशय (गुहा के ऊपरी बाएं भाग में स्थित होता है), को मुख्यतः तीन भागों मे विभाजित किया जा सकता है- **जठरागम भाग** जिसमे ग्रसिका खुलती है, **फंडिस** क्षेत्र और **जठरनिर्गमी** भाग जिसका छोटी आंत में निकास होता है (चित्र 16.3)। छोटी आंत के तीन भाग होते हैं- 'C' आकार की ग्रहणी, कुंडलित मध्यभाग अग्रक्षुद्रांत्र और लंबी कुंडलित क्षुद्रांत्र। आमाशय का ग्रहणी में निकास जठरनिर्गम अवरोधिनी द्वारा नियंत्रित होता है। क्षुद्रांत्र बड़ी आंत मे खुलती है जो अंधनाल, वृहदांत्र और मलाशय से बनी होती है। अंधनाल एक छोटा थैला है जिसमें कुछ सहजीवीय सूक्ष्मजीव रहते हैं। अंधनाल से एक अंगुली जैसा प्रर्वध, परिशेषिका निकलता है जो एक अवशेषी अंग है। अंधनाल, बड़ी आंत में खुलती है। वृहदांत्र तीन भागों में विभाजित होता है- आरोही, अनुप्रस्थ एवं अवरोही भाग। अवरोही भाग मलाशय में खलता है जो मलद्वार (anus) द्वारा बाहर खुलता है।

आहार नाल की दीवार में ग्रसिका से मलाशय तक, चार स्तर होते हैं (चित्र 16.4) जैसे सिरोसा, मस्कुलेरिस, सबम्यूकोसा और म्युकोसा। सिरोसा सबसे बाहरी परत है और एक पतली मेजोथिलियम (अंतरंग अंगों की उपकला) और कुछ संयोजी ऊतकों से बनी होती है। मस्कुलेरिस प्राय: आंतरिक वर्तुल पेशियों एवं बाह्य अनुदैर्घ्य पेशियों की बनी होती है। कुछ भागों मे एक तिर्यक पेशी स्तर होता है। सबम्यूकोसा स्तर रुधिर, लसीका व तंत्रिकाओं युक्त मुलायम संयोजी ऊतक की बनी होती है। ग्रहणी में, कुछ ग्रंथियाँ भी सबम्यूकोसा में पाई जाती हैं। आहार नाल की ल्यूमेन की सबसे भीतरी परत म्यूकोसा है। यह स्तर आमाशय में अनियमित वलय एवं छोटी आंत में अंगुलीनुमा प्रवर्ध बनाता है जिसे **अंकुर** (villi) कहते हैं (चित्र 16.5)। अंकुर की सतह पर स्थित कोशिकाओं से असंख्य सूक्ष्म प्रवर्ध निकलते हैं जिन्हें सूक्ष्म अंकुर कहते हैं, जिससे ब्रस-बार्डर जैसा लगता है। यह रूपांतरण सतही क्षेत्र को अत्यधिक बढ़ा देता है। अंकुरों में केशिकाओं का जाल फैला रहता है और एक बडी लसीका वाहिका (vessel) होती है जिसे

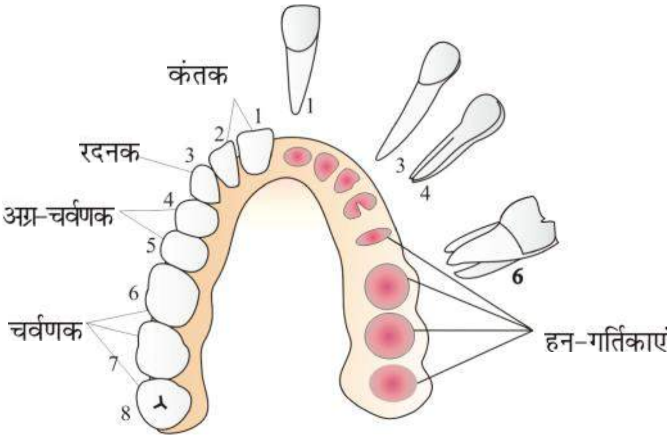

चित्र 16.2 एक ओर हनु में विभिन्न प्रकार के दंत-विन्यास और दसरी ओर हन-गर्तिकाओं को दर्शाते हए।

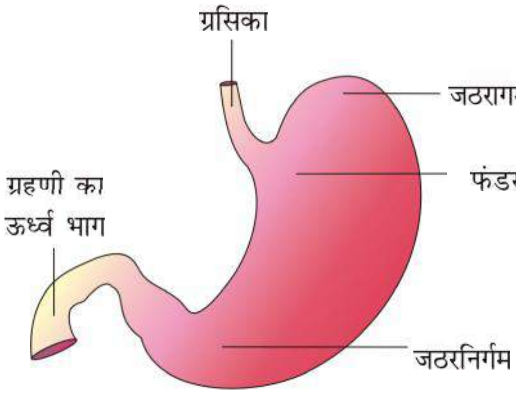

चित्र 16.3 एक ओर हनु में विभिन्न प्रकार के दंत-विन्यास और दसरी ओर हन-गर्तिकाओं को दर्शाते हए।

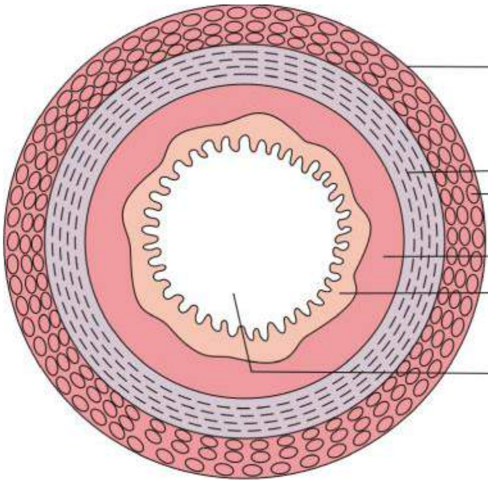

चित्र 16.4 आंत्र की अनप्रस्थ काट का आरेखीय निरूपण

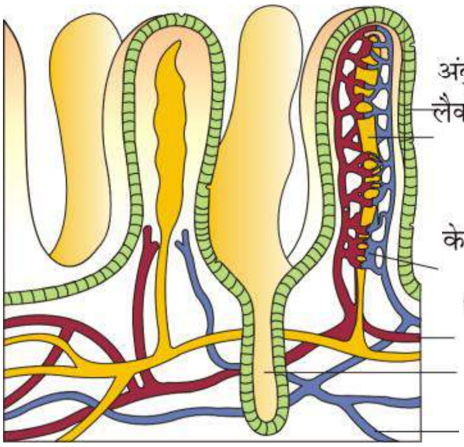

चित्र 16.5 अंकुर दर्शाते हुए क्षुद्रांत्र म्यकोसा का एक भाग

लैक्टीयल कहते हैं। म्यूकोसा की उपकला पर कलश-कोशिकाएं होती हैं, जो स्नेहन के लिए म्यूकस का स्राव करती हैं। म्यूकोसा आमाशय और आंत में स्थित अंकरों के आधारों के बीच लीबरकुन-प्रगुहिका (crypts of Lieberkuhn) भी कुछ ग्रंथियों का निर्माण करती है। सभी चारों परतें आहार नाल के विभिन्न भागों में रूपांतरण दर्शाती हैं।

16.1.2 पाचन ग्रंथियाँ

आहार नाल से संबंधित पाचन ग्रंथियों में लार ग्रंथियाँ, यकृत और अग्नाशय शामिल हैं।

लार का निर्माण तीन जोड़ी ग्रंथियों द्वारा होता है। ये हैं गाल में कर्णपूर्व, निचले जबड़े में अधोजंभ/अवचिबुकीय तथा जिह्वा के नीचे स्थित अधोजिहवा। इन ग्रंथियों से लार मुखगुहा में पहुँचती है।

यकृत (liver) मनुष्य के शरीर की सबसे बड़ी ग्रंथि है जिसका वयस्क में भार लगभग 1.2 से 1.5 किलोग्राम होता है। यह उदर में मध्यपट के ठीक नीचे स्थित होता है और इसकी दो पालियाँ (lobes) होती हैं। यकृत पालिकाएं यकृत की संरचनात्मक और कार्यात्मक इकाइयां हैं जिनके अंदर यकृत कोशिकाएं रज्जु की तरह व्यवस्थित रहती हैं। प्रत्येक पालिका संयोजी ऊतक की एक पतली परत से ढकी होती है जिसे ग्लिसंस केपसल कहते हैं। यकत की कोशिकाओं से पित्त का स्राव होता है जो यकत नलिका से

होते हुए एक पतली पेशीय थैली- पित्ताशय में सांद्रित एवं जमा होता है। पित्ताशय की नलिका यकृतीय नलिका से मिलकर एक मूल पित्त वाहिनी बनाती है (चित्र 16.6)। पित्ताशयी नलिका एवं अग्नाशयी नलिका, दोनों मिलकर यकतअग्नाशयी वाहिनी द्वारा ग्रहणी में खुलती है जो ओडी अवरोधिनी से नियंत्रित होती हैं।

अग्नाशय U आकार के ग्रहणी के बीच स्थित एक लंबी ग्रंथि है जो बहि: स्रावी और अंत: स्रावी, दोनों ही ग्रंथियों की तरह कार्य करती है। बहि: स्रावी भाग से क्षारीय अग्नाशयी स्राव निकलता है, जिसमें एंजाइम होते हैं और अंत: स्रावी भाग से इंसलिन और ग्लकेगोन नामक हार्मोन का स्राव होता है।

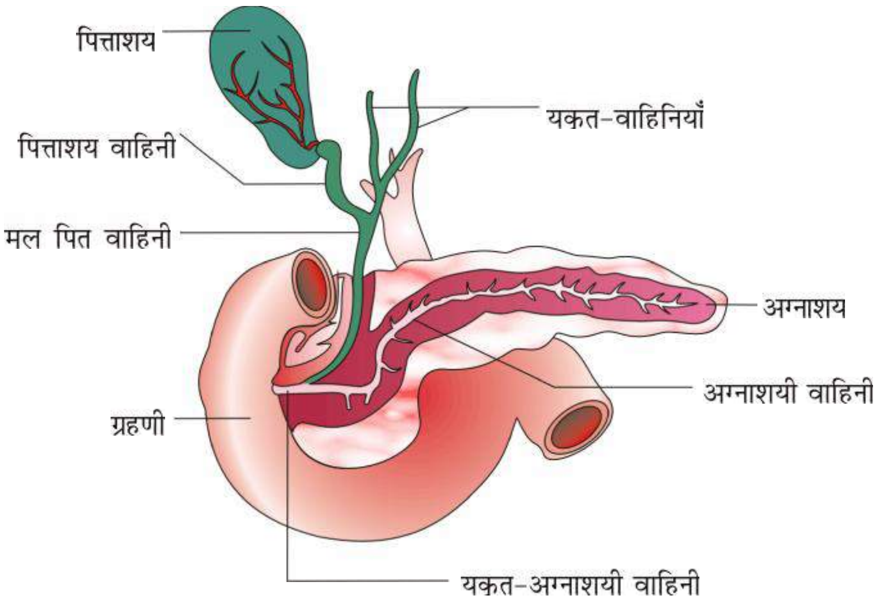

चित्र 16.6 यकत. पित्ताशय और अग्नाशय का वाहिनी-तंत्र

16.2 भोजन का पाचन

पाचन की प्रक्रिया यांत्रिक एवं रासायनिक विधियों द्वारा संपन्न होती है। मुखगुहा के मुख्यत: दो प्रकार्य हैं, भोजन का चर्वण और निगलने की क्रिया। लार की मदद से दांत और जिह्वा भोजन को अच्छी तरह चबाने एवं मिलाने का कार्य करते हैं। लार का श्लेषम भोजन कणों को चिपकाने एवं उन्हें बोलस में रूपांतरित करने में मदद करता है। इसके उपरांत **निगलने की क्रिया** द्वारा **बोलस** ग्रसनी से ग्रसिका में चला जाता है। **बोलस** पेशीय संकुचन के क्रमाकुंचन (peristalsis) द्वारा ग्रसिका में आगे बढ़ता है। जठर-ग्रसिका अवरोधिनी भोजन के अमाशय में प्रवेश को नियंत्रित करती है। लार (मुखगुहा) में विद्युत-अपघट्य (electrolytes) (Na^+, K^+, Cl^-, HCO_3^-) और एंजाइम (लार एमाइलेज या टायलिन तथा लाइसोजाइम) होते हैं। पाचन की रासायनिक प्रक्रिया

मुखगुहा में कार्बोहाइड्रेट को जल अपघटित करने वाली एंजाइम टायलिन या लार एमाइलेज की सक्रियता से प्रारंभ होती है। लगभग 30 प्रतिशत स्टार्च इसी एंजाइम की सक्रियता (pH 6.8) से द्विशर्करा माल्टोज में अपघटित होती है। लार में उपस्थित लाइसोजाइम जीवाणओं के संक्रमण को रोकता है।

$$\text{स्टार्च} \xrightarrow[\text{pH 6.8}]{\text{लार एमाइलेज}} \text{माल्टोज}$$

आमाशय की म्यूकोसा में जठर ग्रंथियाँ स्थित होती हैं। जठर ग्रंथियों में मुख्य रूप से तीन प्रकार की कोशिकाएं होती हैं, *यथा*- (i) म्यूकस का स्राव करने वाली श्लेषमा ग्रीवा कोशिकाएं (ii) पेप्टिक या मुख्य कोशिकाएं जो प्रोएंजाइम पेप्सिनोजेन का स्राव करती हैं तथा (iii) भित्तीय या ऑक्सिन्टिक कोशिकाएं जो हाइड्रोक्लोरिक अम्ल और नैज कारक स्रवित करती हैं (नैज कारक विटामिन B_{12} के अवशोषण के लिए आवश्यक है)। अमाशय 4-5 घंटे तक भोजन का संग्रहण करता है। आमाशय की पेशीय दीवार के संकुचन द्वारा भोजन अम्लीय जठर रस से पूरी तरह मिल जाता है जिसे **काइम** (chyme) कहते हैं। प्रोएंजाइम पेप्सिनोजेन हाइड्रोक्लोरिक अम्ल के संपर्क में आने से सक्रिय एंजाइम पेप्सिन में परिवर्तित हो जाता है; जो आमाशय का प्रोटीन-अपघटनीय एंजाइम है। पेप्सिन प्रोटीनों को प्रोटियोज तथा पेप्टोंस (पेप्टाइडों) में बदल देता है। जठर रस में उपस्थित श्लेष्म एवं बाइकार्बोनेट श्लेष्म उपकला स्तर का स्नेहन और अत्यधिक सांद्रित हाइड्रोक्लोरिक अम्ल से उसका बचाव करते हैं। हाइड्रोक्लोरिक अम्ल पेप्सिनों के लिए उचित अम्लीय माध्यम (pH 1.8) तैयार करता है। नवजातों के जठर रस में रेनिन नामक प्रोटीन अपघटनीय एंजाइम होता है जो दूध के प्रोटीन को पचाने में सहायक होता है। जठर ग्रंथियाँ थोड़ी मात्रा में लाइपेज भी स्रवित करती हैं।

छोटी आंत का पेशीय स्तर कई तरह की गतियां उत्पन करता है। इन गतियों से भोजन विभिन्न स्रावों से अच्छी तरह मिल जाता है और पाचन की क्रिया सरल हो जाती है। यकृत अग्नाशयी नलिका द्वारा पित्त, अग्नाशयी रस और आंत्र-रस छोटी आंत में छोड़े जाते हैं। अग्नाशयी रस में ट्रिप्सिनोजन, काइमोट्रिप्सिनोजन, प्रोकार्बोक्सीपेप्टिडेस, एमाइलेज और न्युक्लिएज एंजाइम निष्क्रिय रूप में होते हैं। आंत्र म्यूकोसा द्वारा स्रावित ऐंटेरोकाइनेज द्वारा ट्रिप्सिनोजन सक्रिय ट्रिप्सिन में बदला जाता है जो अग्नाशयी रस के अन्य एंजाइमों को सक्रिय करता है। ग्रहणी में प्रवेश करने वाले पित्त में पित्त वर्णक (विलिरूबिन एवं विलिवर्डिन), पित्त लवण, कोलेस्टेरॉल और फास्फोलिपिड होते हैं, लेकिन कोई एंजाइम नहीं होता। पित्त वसा के इमल्सीकरण में मदद करता है और उसे बहत छोटे मिसेल कणों में तोड़ता है। पित्त लाइपेज एंजाइम को भी सक्रिय करता है।

आंत्र श्लेषमा उपकला में **गोब्लेट कोशिकाएं** होती हैं जो श्लेषमा का स्राव करती है। म्यूकोसा के ब्रस बॉर्डर कोशिकाओं और गोब्लेट कोशिकाओं के स्राव आपस में मिलकर आंत्र स्राव अथवा **सक्कस एंटेरिकस** बनाते हैं। इस रस में कई तरह के एंजाइम होते हैं, जैसे-ग्लाइकोसिडेज डायपेप्टिडेज, एस्टरेज, न्यूक्लियोसिडेज आदि। म्यूकस अग्नाशय के बाइकार्बोनेट के साथ मिलकर आंत्र म्यकोसा की अम्ल के दष्प्रभाव से रक्षा करता है तथा

एंजाइमों की सक्रियता के लिए आवश्यक क्षारीय माध्यम (pH 7.8) तैयार करता है। इस प्रक्रिया में सब-म्यूकोसल ब्रूनर ग्रंथि भी मदद करती है।

आंत में पहुँचने वाले काइम में उपस्थित प्रोटीन, प्रोटियोज और पेप्टोन (आंशिक अपघटित प्रोटीन) अग्नाशय रस के प्रोटीन अपघटनीय एंजाइम निम्न रूप से क्रिया करते हैं:

प्रोटीन, पेप्टोन, प्रोप्टिोज $\xrightarrow[\text{कार्बोक्सीपेप्टिडेज}]{\text{टि्प्सिन/काइमोटि्प्सिन}}$ डायपेप्टाइड

काइम के कार्बोहाइडेट अग्नाशयी एमाइलेज द्वारा डायसैकेराइड में जलापघटित होते हैं।

पॉलिसैकेराइड (स्टार्च) $\xrightarrow{\text{एमाइलेज}}$ डायसैकेराइड

वसा पित्त की मदद से लाइपेजेज द्वारा क्रमशः डाई और मोनोग्लिसेराइड में टटते हैं।

वसा $\xrightarrow{\text{लाइपेज}}$ डाइग्लिसेराइड $\longrightarrow$ मोनोग्लिसेराइड

अग्नाशयी रस के न्यक्लिएस न्यक्लिक अम्लों को न्यक्लियोटाइड और न्यक्लियोसाइड में पाचित करते हैं।

न्यक्लिक अम्ल $\xrightarrow{\text{न्यक्लिएस}}$ न्यक्लियोटाइड $\longrightarrow$ न्यक्लियोसाइड

आंत्र रस के एंजाइम उपर्युक्त अभिक्रियाओं के अंतिम उत्पादों को पाचित कर अवशोषण योग्य सरल रूप में बदल देते हैं। पाचन के ये अंतिम चरण आंत के म्यकोसल उपकला कोशिकाओं के बहत समीप संपन्न होते हैं।

डाइपेप्टाइड $\xrightarrow{\text{डाइपेप्टिडेजेज}}$ एमीनो अम्ल

माल्टोस $\xrightarrow{\text{माल्टेस}}$ ग्लकोस + ग्लकोस

लैक्टोस $\xrightarrow{\text{लैक्टेस}}$ ग्लकोस + गैलेक्टोस

सक्रोस $\xrightarrow{\text{सक्रेस}}$ ग्लकोस + फ्रक्टोस

न्यक्लियोटाइडेस $\xrightarrow{\text{न्यक्लियोटाइड}}$ न्यक्लियोसाइड $\xrightarrow{\text{यक्लियोसाइडेस}}$ शर्करा + क्षारक

डाइ व मोनोग्लिसराइड $\xrightarrow{\text{लाइपेज}}$ वसीय अम्ल + ग्लेसेरोल

ऊपर वर्णित जैव वृहत् अणुओं के पाचन की क्रिया आंत्र के ग्रहणी भाग में संपन्न होती हैं। इस तरह निर्मित सरल पदार्थ छोटी आंत के अग्रक्षुद्रांत्र और क्षुद्रांत्र भागों में अवशोषित होते हैं। अपचित तथा अनावशोषित पदार्थ बड़ी आंत में चले जाते हैं।

बड़ी आंत में कोई महत्वपूर्ण पाचन क्रिया नहीं होती है। बड़ी आंत का कार्य है- (1) कुछ जल, खनिज एवं औषध का अवशोषण (2) श्लेष्म का स्राव जो अपचित उत्सर्जी पदार्थ कणों को चिपकाने और स्नेहन होने के कारण उनका बाह्य निकास आसान बनाता है। अपचित और अवशोषित पदार्थों को मल कहते हैं. जो अस्थायी रूप से मल त्यागने से पहले तक मलाशय में रहता है।

जठरांत्रिक पथ की क्रियाएं विभिन्न अंगों के उचित समन्वय के लिए तंत्रिका और हॉर्मोन के नियंत्रण से होती है। भोजन के भोज्य पदार्थों को देखने, उनकी गंध और/अथवा मुखगुहा नली में उपस्थिति लार ग्रंथियों को स्राव के लिए उद्दीपित कर सकती हैं। इसी प्रकार जठर और आंत्रिक स्राव भी तंत्रिका संकेतों से उद्दीप्त होते हैं। आहार नाल के विभिन्न भागों की पेशियों की सक्रियता भी स्थानीय एवं केंद्रीय तंत्रिकीय क्रियाओं द्वारा नियमित होती हैं। हार्मोनल नियंत्रण के अंतर्गत, जठर और यॉंत्रिक म्यकोसा से निकलने वाले हार्मोन पाचक रसों के स्राव को नियंत्रित करते हैं।[6]

16.3 पाचित उत्पादों का अवशोषण

अवशोषण वह प्रक्रिया है, जिसमें पाचन से प्राप्त उत्पाद यांत्रिक म्यूकोसा से निकलकर रक्त या लसीका में प्रवेश करते हैं। यह निष्क्रिय, सक्रिय अथवा सुसाध्य परिवहन क्रियाविधियों द्वारा संपादित होता है। ग्लुकोज, ऐमीनो अम्ल, क्लोराइड आयन आदि की थोड़ी मात्रा सरल विसरण प्रक्रिया द्वारा रक्त में पहंच जाती हैं। इन पदार्थों का रक्त में पहुंचना सांद्रण-प्रवणता (concentration gradient) पर निर्भर है। हालांकि, ग्लूकोज और एमीनो एसिड जैसे कुछ पदार्थ वाहक प्रोटीन की मदद से अवशोषित होते हैं। इस क्रियाविधि को सुसाध्य परिवहन कहते हैं।

जल का परिवहन परासरणी प्रवणता पर निर्भर करता है। सक्रिय परिवहन सांद्रण-प्रवणता के विरुद्ध होता है जिसके लिए ऊर्जा की आवश्यकता होती है। विभिन्न पोषक तत्वों जैसे ऐमीनो अम्ल, ग्लुकोस (मोनोसैकेराइड) और सोडियम आयन (विद्युत-अपघटय) का रक्त में अवशोषण इसी क्रियाविधि द्वारा होता है।

वसाम्ल और ग्लिसेरॉल अविलेय होने के कारण रक्त में अवशोषित नहीं हो पाते। सर्वप्रथम वे विलेय सूक्ष्म बूंदों में समाविष्ट होकर आंत्रिक म्यूकोसा में चले जाते हैं जिन्हें मिसेल (micelles) कहते हैं। ये यहाँ प्रोटीन आस्तरित सूक्ष्म वसा गोलिका में पुनः संरचित होकर अंकुरों की लसीका वाहिनियों (लेक्टियल) में चले जाते हैं। ये लसीका वाहिकाएं अंततः अवशोषित पदार्थों को रक्त प्रवाह में छोड़ देती हैं।

पदार्थों का अवशोषण आहारनाल के विभिन्न भागों जैसे-मुख, आमाशय, छोटी आंत और बड़ी आंत में होता है। परंतु सबसे अधिक अवशोषण छोटी आंत में होता है। अवशोषण सारांश (अवशोषण- स्थल और पदार्थ) तालिका 16.1 में दिया गया है।

तालिका 16.1 पाचन तंत्र के विभिन्न भागों में अवशोषण का सारांश

मख	आमाशय	छोटी आंत	बडी आंत
कुछ औषधियाँ जो मुख और जिह्वा की निचली सतह के म्यूकोसा के संपर्क में आती हैं। वे आस्तरित करने वाली रुधिर कोशिकाओं में अवशोषित हो जाती हैं।	जल, सरल शर्करा, एल्कोहॉल, आदि का अवशोषण होता है।	पोषक तत्वों के अवशोषण का प्रमुख अंग। यहां पर पाचन की क्रिया पूरी होती है और पाचन के अंतिम उत्पाद, जैसे-ग्लूकोस, फ्रक्टोस, वसीय अम्ल, ग्लिसेराल, और ऐमीनो अम्ल का म्यूकोसा द्वारा रक्त प्रवाह और लसीका में अवशोषण होता है।	जल, कुछ खनिजों और औषधि का अवशोषण होता है।

अवशोषित पदार्थ अंत में ऊतकों में पहुंचते हैं जहाँ वे विभिन्न क्रियाओं के उपयोग में लाए जाते हैं। इस प्रक्रिया को स्वांगीकरण (assimilation) कहते हैं।

पाचक अवशिष्ट मलाशय में कठोर होकर संबद्ध मल वन जाता है जो तांत्रिक प्रतिवर्ती (neural reflex) क्रिया को शुरू करता है जिससे मलत्याग की इच्छा पैदा होती है। मलद्वार से मल का बहिक्षेपण एक ऐच्छिक क्रिया है जो एक बहत क्रमाकंचन गति से परी होती है।

16.4 पाचन तंत्र के विकार (Disorder) और अनियमितताएं

आंत्र नलिका का शोथ जीवाणुओं और विषाणुओं के संक्रमण से होने वाला एक सामान्य विकार है। आंत्र का संक्रमण परजीवियों. जैसे- फीता कमि. गोलकमि. सत्रकमि. हकवर्म. पिनवर्म. आदि से भी होता है।[7]

पीलिया *(Jaundice)* **:** इसमें यकृत प्रभावित होता है। पीलिया में त्वचा और आंख पित्त वर्णकों के जमा होने से पीले रंग के दिखाई देते हैं।

वमन *(Vomiting)* **:** यह आमाशय में संगृहीत पदार्थों की मुख से बाहर निकलने की क्रिया है। यह प्रतिवर्ती क्रिया मेडुला में स्थित वमन केंद्र से नियंत्रित होती है। उल्टी से पहले बेचैनी की अनभति होती है।

प्रवाहिका *(Diarrhoea)* **:** आंत्र (bowel) की अपसामान्य गति की बारंबारता और मल का अत्यधिक पतला हो जाना प्रवाहिका (diarrhoea) कहलाता है। इसमें भोजन अवशोषण की क्रिया घट जाती है।

कोष्ठबद्धता (कब्ज) *(Constipation)* **:** कब्ज में. मलाशय में मल रुक जाता है और आंत्र की गतिशीलता अनियमित हो जाती है।

अपच *(Indigestion)* **:** इस स्थिति में, भोजन पूरी तरह नहीं पचता है और पेट भरा-भरा महसूस होता है। अपच एंजाइमों के स्राव में कमी, व्यग्रता. खाद्य विषाक्तता. अधिक भोजन करने. एवं मसालेदार भोजन करने के कारण होती है।

सारांश

मानव के पाचन तंत्र में एक आहार नाल और सहयोगी ग्रंथियाँ होती हैं। आहर नाल मुख, मुखगुहा, ग्रसनी, ग्रसिका, आमाशय, क्षुद्रांत्र, वृहदांत्र, मलाशय और मलद्वार से बनी होती है। सहायक पाचन ग्रंथियों में लार ग्रंथि, यकृत (पित्ताशय सहित) और अग्नाशय हैं। मुख के अंदर दाँत भोजन को चबाते हैं, जीभ स्वाद को पहचानती है और भोजन को लार के साथ मिलाकर इसे अच्छी तरह से चबाने के लिए सुगम बनाती है। लार में मंड या मांड (स्टार्च) पचाने वाली पाचक एंजाइम, लार एमिलेज होती है जो मांड को पचाकर माल्टोस (डाइसैकेराइड) में बदल देती हैं। इसके बाद भोजन ग्रसनी से होकर बोलस के रूप में ग्रसिका में प्रवेश करता है, जो आगे क्रमाकुंचन द्वारा आमाशय तक ले जाया जाता है। आमाशय में मुख्यत: प्रोटीन का पाचन होता है। सरल शर्कराओं. अल्कोहल और दवाओं का भी आमाशय में अवशोषण होता है।

काइम क्षुद्रांत्र के ग्रहणी भाग में प्रवेश करता है जहाँ अग्नाशयी रस, पित्त और अंत में आंत्र रस के एंजाइमों द्वारा कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन और वसा का पाचन पूरा होता है। इसके बाद भोजन छोटी आँत के अग्र क्षद्रांत्र (जेजुनम) और क्षुद्रांत्र (इलियम) भाग में जाता है।

पाचन के पश्चात कार्बोहाइड्रट, ग्लुकोस जैसे- मोनोसैकेराइड में परिवर्तित हो जाते हैं। अंतत: प्रोटीन टूटकर ऐमीनो अम्लों में तथा वसा, वसीय अम्लों और ग्लिसेराल में परिवर्तित हो जाते हैं। आँत-उत्पादों का पाचित आँत अंकुरों के उपकला स्तर द्वारा शरीर में अवशोषित हो जाता है। अपचित भोजन (मल) त्रिकांत्र (ileoceacal) कपाट द्वारा वृहदांत्र की अंधनाल (caecum) में प्रवेश करता है। इलियो सीकल कपाट मल को वापस नही जाने देता। अधिकांश जल बड़ी आँत में अवशोषित हो जाता है। अपचित भोजन अर्ध ठोस होकर मलाशय और गदा नाल में पहँचता है और अंतत: गदा द्वारा बहि:क्षेपित हो जाता है।

अभ्यास

1. निम्नलिखित में से सही उत्तर छाँटें :
   (क) आमाशय रस में होता है-
      (अ) पेप्सिन, लाइपेस और रेनिन
      (ब) ट्रिप्सिन, लाइपेस और रेनिन
      (स) ट्रिप्सिन, पेप्सिन और लाइपेस
      (द) ट्रिप्सिन, पेप्सिन और रेनिन
   (ख) सक्कस एंटेरिकस नाम दिया गया है-
      (अ) क्षुद्रांत्र (illum) और बडी आँत के संधिस्थल के लिए
      (ब) आंत्रिक रस के लिए
      (स) आहार नाल में सजन के लिए
      (द) परिशेषिका (appendix) के लिए

2. स्तंभ I का स्तंभ II से मिलान कीजिए।

स्तंभ I	**स्तंभ II**
बिलिरुबिन और बिलिवर्डिन	पैरोटिड
मंड (स्टार्च) का जल-अपघटन	पित्त
वसा का पाचन	लाइपेस
लार ग्रंथि	एमाइलेस

3. संक्षेप में उत्तर दें :
   (क) अंकुर (villi) छोटी आंत में होते हैं, आमाशय में क्यों नहीं ?
   (ख) पेप्सिनोजेन अपने सक्रिय रूप में कैसे परिवर्तित होता है ?
   (ग) आहार नाल की दीवार के मूल स्तर क्या हैं ?
   (घ) वसा के पाचन में पित्त कैसे मदद करता है?
4. प्रोटीन के पाचन में अग्नाशयी रस की भमिका स्पष्ट करें।
5. आमाशय में प्रोटीन के पाचन की क्रिया का वर्णन करें।
6. मनष्य का दंत-सत्र बताइए।
7. पित्त रस में कोई पाचक एंजाइम नहीं होते. फिर भी यह पाचन के लिए महत्वपर्ण हैं: क्यों?
8. पाचन में काइमोट्रिप्सिन की भमिका वर्णित करें। जिस ग्रंथि से यह स्रवित होता है. इसी श्रेणी के दो अन्य एंजाइम कौन से हैं?
9. पॉलि सैकेराइड और डाइसैकेराइड का पाचन कैसे होता है?
10. यदि आमाशय में हाइडोक्लोरिक अम्ल का स्राव नहीं होगा तो तब क्या होगा?
11. आपके द्वारा खाए गए मक्खन का पाचन और उसका शरीर में अवशोषण कैसे होता है? विस्तार से वर्णन करें।
12. आहार नाल के विभिन्न भागों में प्रोटीन के पाचन के मख्य चरणों का विस्तार से वर्णन करें।
13. 'गर्तदंती' (thocodont) और 'द्विबारदंती' (diphyodont) शब्दों की व्याख्या करें।
14. विभिन्न प्रकार के दाँतों का नाम और एक वयस्क मनष्य में दाँतों की संख्या बताएं।
15. यकत के क्या कार्य हैं ?

अध्याय 17

श्वसन और गैसों का विनिमय

17.1 श्वसन के अंग

17.2 श्वसन की क्रियाविधि

17.3 गैसों का विनिमय

17.4 गैसों का अभिगमन

17.5 श्वसन का नियंत्रण

17.6 श्वसन संबंधी विकार

जैसाकि आप पहले पढ़ चुके हैं, सजीव पोषक तत्वों जैसे- ग्लूकोज को तोड़ने के लिए ऑक्सीजन (O_2) का परोक्ष रूप से उपयोग करते हैं, जिससे विभिन्न क्रियाओं को संपादित करने के लिए आवश्यक ऊर्जा प्राप्त होती है उपरोक्त अपचयी क्रियायों मे कार्बनडाइऑक्साइड (CO_2) भी मक्त होती है जो हानिकारक है। इसलिए यह आवश्यक है कि कोशिकाओं को लगातार O_2 उपलब्ध कराई जाए और CO_2 को बाहर मुक्त किया जाए। वायुमंडलीय O_2 और कोशिकाओं में उत्पन्न CO_2 के आदान-प्रदान (विनिमय)की इस प्रक्रिया को **श्वासन** (Breathing) समान्यतया **श्वसन** (Respiration) कहते हैं। अपने हाथों को अपने सीने पर रखिए, आप सीने को ऊपर नीचे होते हुए अनुभव कर सकते हैं। आप जानते हैं कि यह श्वसन के कारण है। हम श्वास कैसे लेते हैं? इस अध्याय के निम्नलिखित खंडों में श्वसन अंगों और श्वसन की क्रियाविधि का वर्णन किया गया है।

17.1 श्वसन के अंग

प्राणियों के विभिन्न वर्गों के बीच श्वसन की क्रियाविधि उनके निवास और संगठन के अनसार बदलती है। निम्न अकशेरुकी जैसे स्पंज, सीलंटेरेटा चपटेकृमि आदि O_2 और CO_2 का आदान-प्रदान अपने सारे शरीर की सतह से सरल विसरण द्वारा करते हैं। केंचुए अपनी आर्द्र क्यूटिकल को श्वसन के लिए उपयोग करते हैं। कीटों के शरीर में नलिकाओं का एक जाल (श्वसन नलिकाएं) होता है: जिनसे वातावरण की वाय का उनके शरीर

में विभिन्न स्थान पर पहुँचती है; ताकि कोशिकाएं सीधे गैसों का आदान-प्रदान कर सकें। जलीय आर्थोपोडा तथा मौलस्का में श्वसन विशेष संवहनीय संरचना **क्लोम** (गिल) द्वारा होता है, जबकि स्थलचर प्राणियों में श्वसन विशेष संवहनीय थैली फुप्फुस/**फेफड़े** द्वारा होता है। कशेरुकों में मछलियाँ क्लोम (गिल) द्वारा श्वसन करती हैं जबकि सरीसृप,पक्षी और स्तनधारी फेफड़ों द्वारा श्वसन करते हैं। उभयचर जैसे मेंढक अपनी आर्द्र त्वचा (नम त्वचा) द्वारा भी श्वसन कर सकते हैं। स्तनधारियों में एक पर्ण विकसित श्वसन प्रणाली होती है।

17.1.1 मानव श्वसन तंत्र

हमारे एक जोड़ी बाह्य नासाद्वार होते हैं, जो होठों के ऊपर बाहर की तरफ खुलते हैं। ये नासा मार्ग द्वारा नासा कक्ष तक पहुँचते हैं। नासा कक्ष **ग्रसनी** में खुलते हैं। ग्रसनी आहार और वायु दोनों के लिए उभयनिष्ठ मार्ग है। ग्रसनी कंठ द्वारा **श्वासनली** में खुलती है। कंठ एक उपास्थिमय पेटिका है जो ध्वनि उत्पादन में सहायता करती है इसीलिए इसे **ध्वनि पेटिका** भी कहा जाता है। भोजन निगलते समय घाँटी एक पतली लोचदार उपास्थिल पल्ले/फ्लैप **कंठच्छद**(epiglottis) से ढक जाती है, जिससे आहार ग्रसनी से कंठ में प्रवेश न कर सके। श्वासनली एक सीधी नलिका है जो वक्ष गुहा के मध्य तक 5वीं वक्षीय कशेरुकी तक जाकर दाईं और बाईं दो प्राथमिक **श्वसनियों** में विभाजित हो जाती है। प्रत्येक श्वसनी कई बार विभाजित होते हुए द्वितीयक एवं तृतीयक स्तर की श्वसनी, श्वसनिका और बहुत पतली अंतस्थ श्वसनिकाओं में समाप्त होती हैं। श्वासनली, प्राथमिक, द्वितीयक एवं तृतीयक श्वसनी तथा प्रारंभिक श्वसनिकाएं अपूर्ण उपास्थिल वलयों से आलंबित होती हैं। प्रत्येक अंतस्थ श्वसनिका बहुत सारी पतली अनियमित भित्ति युक्त वाहिकायित थैली जैसी संरचना कूपिकाओं में खुलती है, जिसे **वायु कूपिका** कहते हैं। श्वसनी, श्वसनिकाओं और कूपिकाओं का शाखित जाल फेफड़ों (lungs) की रचना करते हैं (चित्र 17.1)। हमारे दो फेफड़े हैं जो एक द्विस्तरीय फुप्फुसावरण (pleura) से ढके रहते हैं और जिनके बीच फुफ्फुसावरणी द्रव भरा होता है। यह फेफड़े की सतह पर घर्षण कम करता है। बाहरी फुप्फुसावरणी झिल्ली वक्षीय पर्त के निकट संपर्क में रहती है; जबकि आंतरिक फुप्फुसावरणी झिल्ली फेफड़े की सतह के संपर्क में होती है। बाह्य नासारंध्र से अंतस्थ श्वसनिकाओं तक का भाग चालन भाग; जबकि कूपिकाएं एवं उनकी नलिकाएं श्वसन तंत्र का श्वसन या विनिमय भाग गठित करती हैं। चालन भाग वायुमंडलीय वायु को कूपिकाओं तक संचारित करता है, इसे बाहरी कणों से मुक्त करता है, आर्द्र करता है तथा वायु को शरीर के तापक्रम तक लाता है। विनिमय भाग (आदान-प्रदान इकाई) रक्त एवं वायुमंडलीय वायु के बीच O_2 और CO_2 का वास्तविक विसरण स्थल है। फेफड़े वक्ष-गुहा में स्थित होते हैं जो शारीरतः एक वायुरोधी कक्ष है। वक्ष-गुहा कक्ष पृष्ठ भाग में कशेरुक दंड, अधर भाग में उरोस्थि, पार्श्व में पसलियों और नीचे से गुंबदाकर डायाफ्राम (diaphragm) द्वारा बनता है। वक्ष में फेफड़ों की शारीरिक व्यवस्था ऐसी होती है कि वक्ष गुहा के आयतन में कोई भी परिवर्तन फेफड़े (फुप्फुसी) की गुहा में प्रतिबिंबित हो जाएगा। श्वसन के लिए ऐसी व्यवस्था आवश्यक है, क्योंकि हम लोग सीधे फेफडों का आयतन नहीं बदल सकते।

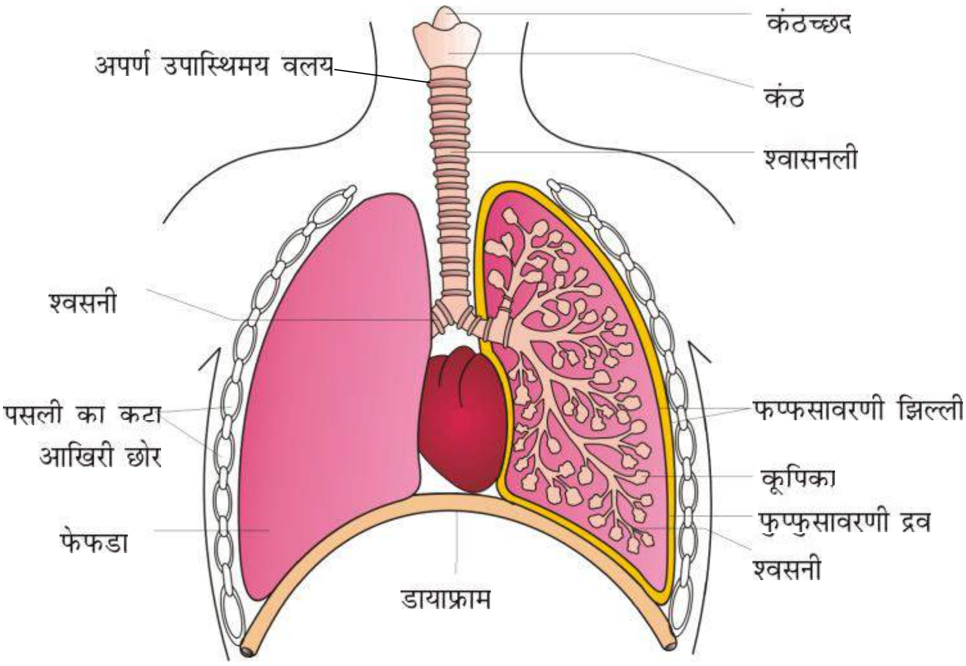

चित्र 17.1 मानव श्वसन तंत्र का आरेखीय दृश्य (साथ ही बाएं फेफडे का अनप्रस्थ काट दिखाया गया है)

श्वसन में निम्नलिखित चरण सम्मिलित हैं:

(i) श्वसन या फुप्फुसी संवातन जिससे वायुमंडलीय वायु अंदर खींची जाती है और CO_2 से भरपूर कूपिका की वायु को बाहर मक्त किया जाता है।
(ii) कूपिका झिल्ली के आर-पार गैसों (O_2 और CO_2) का विसरण।
(iii) रुधिर द्वारा गैसों का परिवहन (अभिगमन)
(iv) रुधिर और ऊतकों के बीच O_2 और CO_2 का विसरण।
(v) अपचयी क्रियायों के लिए कोशिकाओं द्वारा O_2 का उपयोग और उसके फलस्वरूप CO_2 का उत्पन्न होना (कोशिकीय श्वसन.जैसे कि अध्याय 14-श्वसन में बताया गया है)।

17.2 श्वासन की क्रियाविधि

श्वासन में दो चरण सम्मिलित है: **अंत:श्वसन** (श्वासन) जिसके दौरान वायुमंडलीय वायु को अंदर खीचा जाता है और **नि:श्वसन** जिसके द्वारा फुप्फुसी वायु को बाहर मुक्त किया जाता है। वायु को फेफड़ों के अंदर ले जाने के लिए फेफडों एवं वायमंडल के बीच दाब प्रवणता निर्मित की जाती है।

अंत:श्वसन तभी हो सकता है जब वायुमंडलीय दाब से फेफड़ों की वायु का दाब (आंतर फुप्फुसी दाब) कम हो अर्थात् फेफड़ों का दाब वायुमंडलीय दाब के सापेक्ष कम होता है। इस तरह नि:श्वसन तब होता है. जब आंतर फप्फसी दाब वायमंडलीय दाब से

अधिक होता है। डायाफ्राम और एक विशिष्ट पेशी समूह (पसलियों के बीच स्थित बाह्य एवं अंत: अंतरापर्शुक /इंटरकोस्टल) इस तरह की प्रवणताएं उत्पन्न करते हैं । अंत:श्वसन डायाफ्राम के संकचन से प्रारंभ होता है जो अग्र पश्च अक्ष (antero posterior axis) में वक्ष गुहा का आयतन बढ़ा देता है। बाह्य अंतरापर्शुक पेशियों का संकुचन पसलियों और उरोस्थि को ऊपर उठा देता है, जिससे पृष्ठधार अक्ष (dorso ventral axis) में वक्ष-गुहा कक्ष का आयतन बढ़ जाता है। वक्ष गुहा के आयतन मे किसी प्रकार से भी हुई वृद्धि के कारण फुप्फुस के आयतन में भी समान वृद्धि होती है। यह समान तरह की वृद्धि फुप्फुसी दाब को वायुमंडलीय दाब से कम कर देती है, जिससे बाहर की वायु बलपूर्वक फेफड़ों के अंदर आ जाती है अर्थात् अंत:श्वसन की क्रिया होती है (चित्र-17.2अ)। डायाफ्राम और अंतरापर्शुक पेशियों का शिथिलन (relaxation) डायाफ्रम और उरोस्थि को उनके सामान्य स्थान पर वापस कर देता है और वृक्षीय आयतन को घटाता है जिससे फुप्फुसी आयतन भी घट जाता है। इसके परिणामस्वरूप अंतर फुप्फुसी दाब वायुमंडलीय दाब से थोड़ा अधिक हो जाता है, जिससे फेफड़ों की हवा बाहर निकल जाती है अर्थात् नि:श्वसन हो जाता है (चित्र 17.2 ब)। हम अपनी अतिरिक्त उदरीय पेशियों की सहायता से अंत:श्वसन और नि:श्वसन की क्षमता को बढ़ा सकते हैं। औसतन एक स्वस्थ मनुष्य प्रति मिनट 12-16 बार श्वसन करता है। श्वसन गतिविधियों में सम्मिलित वायु के आयतन का आकलन स्पाइरोमीटर की सहायता से किया जा सकता है जो फुप्फुसी कार्यकलापों का नैदानिक मल्यांकन करने में सहायक होता है।

17.2.1 श्वसन संबंधी आयतन और क्षमताएं

ज्वारीय आयतन (Tidal Volume/ TV): सामान्य श्वसन क्रिया के समय प्रति श्वास अंत: श्वासित या नि:श्वासित वायु का आयतन यह लगभग 500 मिली. होता है अर्थात् स्वस्थ मनुष्य लगभग 6000 से 8000 मिली. वायु प्रति मिनट की दर से अंत: श्वासित/नि:श्वासित कर सकता है।

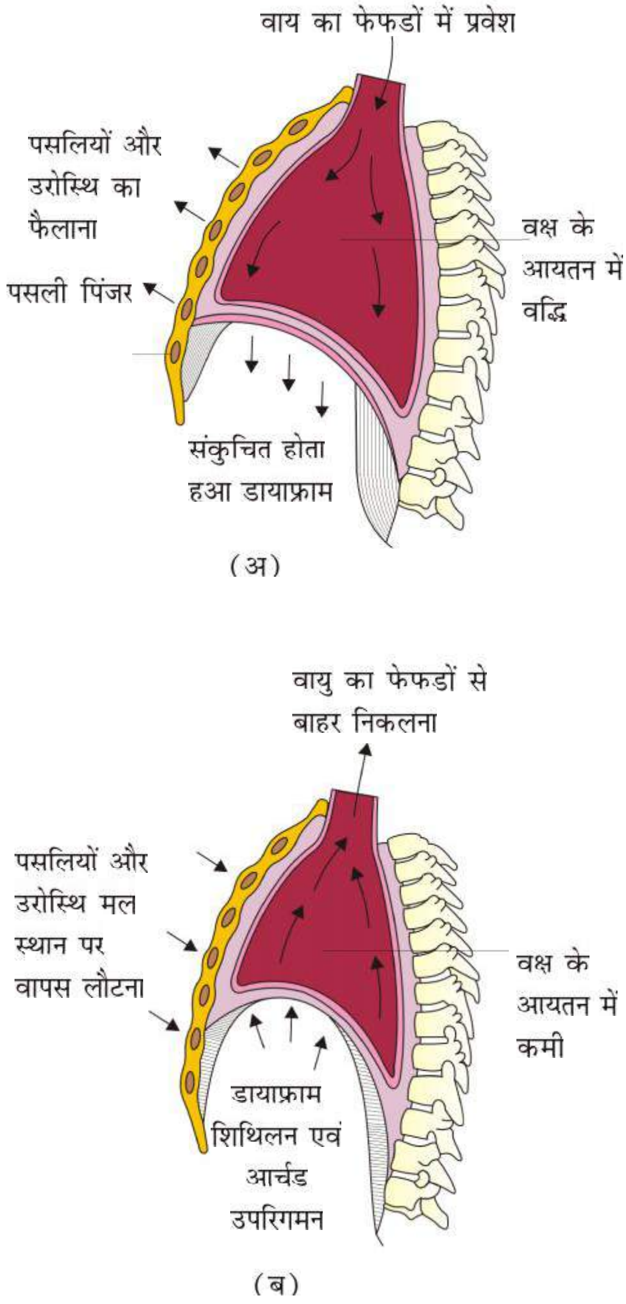

चित्र 17.2 (अ) अंत: श्वसन (ब) नि:श्वसन दर्शाते हए श्वसन की क्रियाविधि

***अंत:श्वसन सुरक्षित आयतन* (Inspiratory Reserve Volume IRV):** वायु आयतन की वह अतिरिक्त मात्रा जो एक व्यक्ति बलपूर्वक अंत: श्वासित कर सकता है। यह औसतन 2500 मिली. से 3000 मिली. होता है।

निःश्वसन सुरक्षित आयतन (Expiratory reserve volume, ERV): वायु आयतन की वह अतिरिक्त मात्रा जो एक व्यक्ति बलपर्वक नि:श्वासित कर सकता है। औसतन यह 1000 मिली. से 1100 मिली. होती है।

अवशिष्ट *आयतन* (Residual Volume RV): वायु का वह आयतन जो बलपूर्वक नि:श्वसन के बाद भी फेफडों में शेष रह जाता है। इसका औसत 1100 मिली. से 1200 मिली. होता है।

ऊपर वर्णित कुछ श्वसन संबंधी आयतनों को जोड़कर फुप्फुसी क्षमताएं (फुप्फुसी धारिताएं) निकाली जा सकती हैं जिनका नैदानिक उददेश्यों में उपयोग किया जा सकता है।

अंत:श्वसन क्षमता (Inspiratory Capacity, IC): सामान्य नि:श्वसन उपरांत वायु की कुल मात्रा (आयतन)जो एक व्यक्ति अंत:श्वासित कर सकता है। इसमें ज्वारीय आयतन तथा अंत:श्वसन सरक्षित आयतन सम्मिलित है (TV+IRV)।

नि:श्वसन *क्षमता* (Expiratory Capacity, EC): सामान्य अंत:श्वसन उपरांत वायु की कुल मात्रा (आयतन) जिसे एक व्यक्ति नि:श्वासित कर सकता है। इसमें ज्वारीय आयतन और नि:श्वसन सुरक्षित आयतन सम्मिलित होते हैं (TV+ERV)।

क्रियाशील अवशिष्ट क्षमता (Functional Residual Capacity, FRC): सामान्य नि:श्वसन उपरांत वायु की वह मात्रा (आयतन)जो फेफड़ों में शेष रह जाती है। इसमें नि:श्वसन सुरक्षित आयतन और अवशिष्ट आयतन सम्मिलित होते हैं (ERV+RV)।

जैव क्षमता (Vital Capacity, VC): बलपूर्वक नि:श्वसन के बाद वायु की वह अधिकतम मात्रा (आयतन)जो एक व्यक्ति अंत:श्वासित कर सकता है। इसमें ERV, TV और IRV सम्मिलित है अथवा वायु की वह अधिकतम मात्रा जो एक व्यक्ति बलपर्वक अंत:श्वसन के बाद नि:श्वासित कर सकता है।

फेफड़ों की *कुल क्षमता* (Total Lung Capacity): बलपूर्वक नि:श्वसन के पश्चात फेफड़ों में समायोजित (उपस्थित) वायु की कुल मात्रा । इसमें RV,ERV,TV और IRV सम्मिलित है। यानि जैव क्षमता + अवशिष्ट क्षमता (VC+RV)।

17.3 गैसों का विनिमय

कुपिकाएं गैसों के विनिमय के लिए प्राथमिक स्थल होती हैं। गैसों का विनिमय रक्त और ऊतकों के बीच भी होता है। इन स्थलों पर O_2 और CO_2 का विनिमय दाब अथवा सांद्रता प्रवणता के आधार पर सरल विसरण द्वारा होता है। गैसों की घुलनशीलता के साथ-साथ विसरण में सम्मिलित झिल्लियों की मोटाई भी विसरण की दर को प्रभावित करने वाले कुछ महत्वपूर्ण घटक हैं।

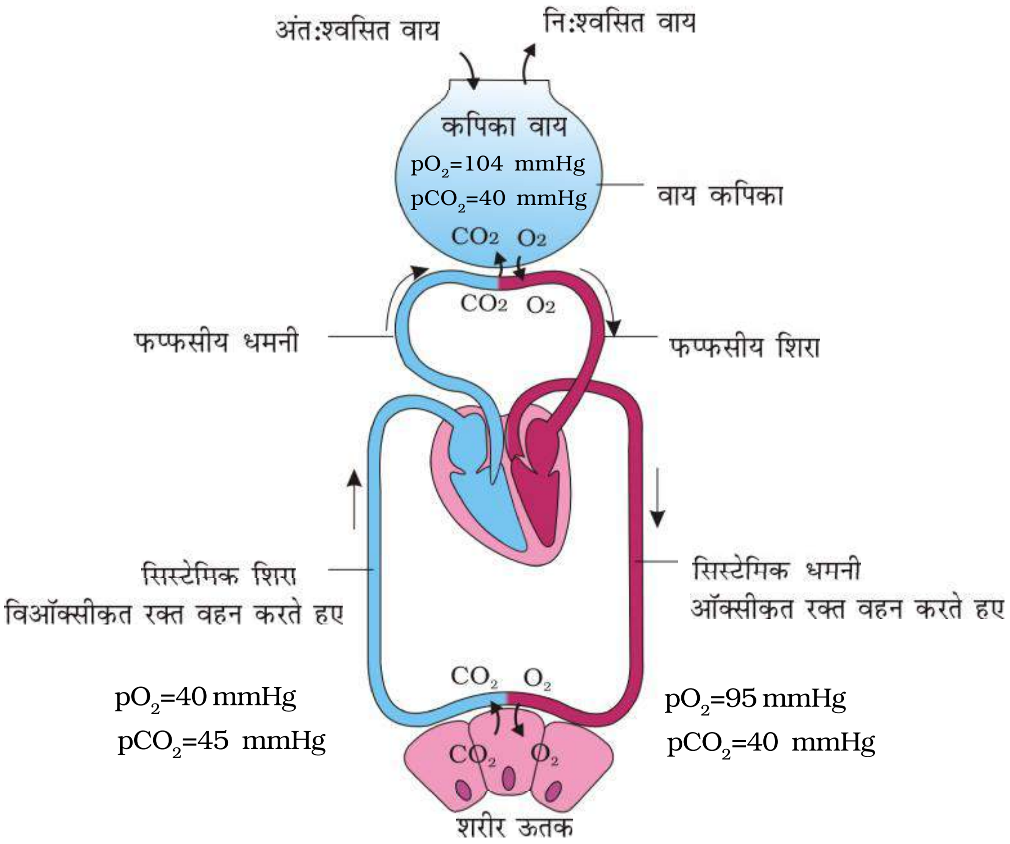

चित्र 17.3 वायु कूपिका एवं शरीर ऊतकों के बीच गैसों का विनिमय जो ऑक्सीजन तथा कार्बन -डाइऑक्साइड का रक्त के साथ वहन का आरेखीय चित्र

गैसों के मिश्रण में किसी विशेष गैस की दाब में भागीदारी को आंशिक दाब कहते हैं और उसे ऑक्सीजन तथा कार्बनडाइऑक्साइड के लिए क्रमश: pO_2 तथा pCO_2 द्वारा दर्शाते हैं। वायुमंडलीय वायु और दोनों विसरण स्थलों में इन दो गैसों के आंशिक दाब तालिका 17.1 और चित्र 17.3 में दर्शाए गए है। सारणी में दिए गए आँकड़ें स्पष्ट रूप से कूपिकाओं से रक्त और रक्त से ऊतकों में ऑक्सीजन के लिए सांद्रता प्रवणता का संकेत देते हैं। इसी प्रकार CO_2 के लिए विपरीत दिशा में प्रवणता दर्शाई गई है, अर्थात् ऊतकों से रक्त और रक्त से कपिकाओं की तरफ। चँकि CO_2 की घनलशीलता O_2 की

तालिका 17.1 वातावरण की तुलना में विसरण में सम्मिलित विभिन्न भागों पर ऑक्सीजन एवं कार्बनडाइऑक्साइड का आंशिक दबाव (mm Hg में)

श्वसन	वातावरणीय वाय	वाय कपिका	अनॉक्सीकत रक्त	ऑक्सीकत रक्त	ऊतक
O_2	159	104	40	95	40
CO_2	0.3	40	45	40	45

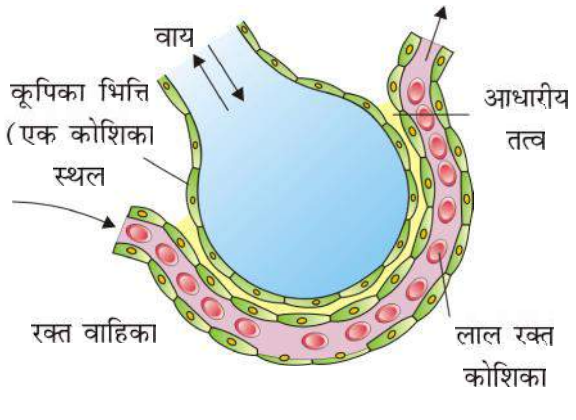

चित्र 17.4 एक फुप्फुसीय वाहिका की एक वायकपिका का अनप्रस्थ काट

घुलनशीलता से 20-25 गुना अधिक होती है, अंत:विसरण झिल्लिका में से प्रति इकाई आंशिक दाब के अंतर की विसरित होने वाली CO_2 मात्रा O_2 की तुलना में बहुत अधिक होती है। विसरण झिल्लिका मुख्य रूप से तीन स्तरों की बनी होती है, (चित्र 17.4), यथा कूपिका की पतली शल्की उपकला (शल्की एपिथिलियम), कूपिकाओं की कोशिकाओं की अंत:कला और उनके बीच स्थित आधारी तत्व । फिर भी, इनकी कुल मोटाई एक मिलीमीटर से बहुत कम होती है। इसलिए हमारे शरीर में सभी कारक O_2 के कूपिकाओं से ऊतकों और CO_2 के ऊतकों से कपिकाओं में विसरण के लिए अनकल होते हैं।

17.4 गैसों का परिवहन (Transport of Gases)

O_2 और CO_2 के परिवहन का माध्यम रक्त होता है। लगभग 97 प्रतिशत O_2 का परिवहन रक्त में लाल रक्त कणिकाओं द्वारा होता है। शेष 3 प्रतिशत O_2 का प्लाजमा द्वारा घुल्य अवस्था में होता हैं। लगभग 20-25 प्रतिशत CO_2 का परिवहन लाल रक्त कणिकाओं द्वारा है, जबकि 70 प्रतिशत का बाईकार्बोनेट के रूप में अभिगमित होती है। लगभग 7 प्रतिशत CO_2 प्लाजमा द्वारा घल्य अवस्था होता हैं।

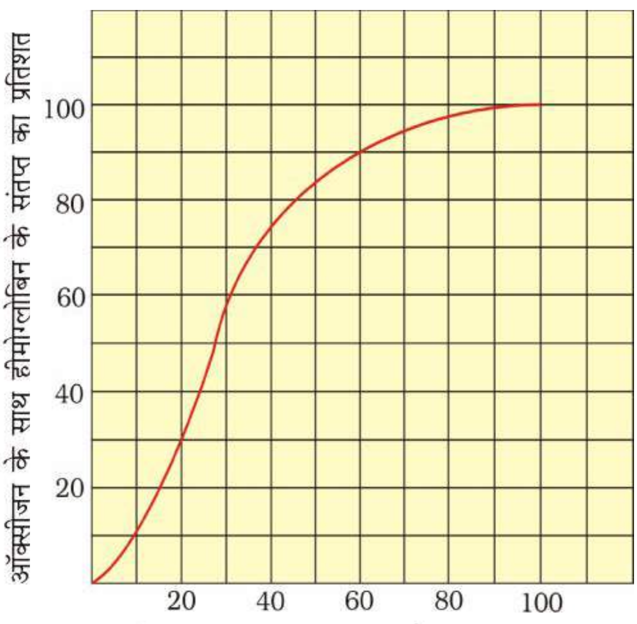

चित्र 17.5 ऑक्सीजन वियोजन वक्र

17.4.1 ऑक्सीजन का परिवहन (Transport of Oxygen)

हीमोग्लोबिन लाल रक्त कणिकाओं में स्थित एक लाल रंग का लौहयक्त वर्णक है। हीमोग्लोबिन के साथ उत्क्रमणीय (Rerersible) ढंग से बंधकर ऑक्सीजन **ऑक्सी-हीमोग्लोबिन** का गठन कर सकता है। प्रत्येक हीमोग्लोबिन अणु अधिकतम चार O_2 अणुओं के वहन कर सकते हैं। हीमोग्लोबिन के साथ ऑक्सीजन का बंधना प्राथमिक तौर पर O_2 के आंशिक दाब से संबंधित है। CO_2 का आंशिक दाब हाइड्रोजन आयन सांद्रता और तापक्रम कुछ अन्य कारक हैं जो इस बंधन को बाधित कर सकते हैं। हीमोग्लोबिन की ऑक्सीजन से प्रतिशत संतृप्ति को pO_2 के सापेक्ष आलेखित करने पर सिग्माभ वक्र (Sigmoid Curve) प्राप्त होता है। इस वक्र को वियोजन वक्र (Dissociation Curve) कहते हैं जो हीमोग्लोबिन से O_2 बंधन को प्रभावित करने वाले pCO_2, H^+ आयन सांद्रता, आदि घटकों के अध्ययन में अत्यधिक सहायक होता है (चित्र 17.5)। कूपिकाओं में जहाँ उच्च pO_2, निम्न pCO_2, कम H^+ सांद्रता और

निम्न तापक्रम होता है, वहाँ ऑक्सीहीमोग्लोबिन बनाने के लिए ये सभी घटक अनुकूल साबित होते हैं जबकि ऊतकों में निम्न pO_2, उच्च pCO_2, उच्च H^+ सांद्रता और उच्च तापक्रम की स्थितियाँ ऑक्सीहीमोग्लोबिन से ऑक्सीजन के वियोजन के लिए अनुकूल होती हैं। इससे स्पष्ट है कि O_2 हीमोग्लोबिन से फेफड़ों की सतह पर बँधता है और ऊतकों में वियोजित हो जाती है। प्रत्येक 100 मिली. ऑक्सीजनित रक्त सामान्य शरीर क्रियात्मक स्थितियों में ऊतकों को लगभग 5 मिली. O_2 प्रदान करता है।

17.4.2 कार्बनडाइऑक्साइड का परिवहन

कार्बनडाइऑक्साइड (CO_2) हीमोग्लोबिन द्वारा **कार्बामीनो-हीमोग्लोबिन** (लगभग 20-25 प्रतिशत) के रूप में वहन की जाती है। यह बंधनीयता (बंधन) CO_2 के आंशिक दाब से संबंधित होती है। pO_2 इस बंधन को प्रभावित करने वाला एक मुख्य कारक है ऊतकों में उच्च pCO_2 और निम्न pO_2 की अवस्था होने से हीमोग्लोबिन से CO_2 का बंधन होता है; जबकि कूपिका में, जहाँ pCO_2 निम्न और pO_2 उच्च होता है, कार्बामीनो-हीमोग्लोबिन से CO_2 का वियोजन होने लगता है अर्थात् ऊतकों में हीमोग्लोबिन से बंधित CO_2 कूपिका में मुक्त हो जाती है। एंजाइम कार्बोनिक एन्हाइड्रेज की सांद्रता लाल रक्त कणिकाओं में उच्च और प्लाज्मा में अल्प होती है। इस एंजाइम से निम्नलिखित प्रतिक्रिया दोनों दिशाओं में सगम होती है।

$$CO_2 + H_2O \xrightleftharpoons{\text{dkckfud ,gkbMªt}} H_2CO_3 \xrightleftharpoons{\text{dkckfud ,gkbMªt}} HCO_3^- + H^+$$

Årdk e vip; oQ dkj.k pCO_2 vf/d gku l CO_2 jDr (RBCs vkj lykTek) e folfjr gkrh g vkj HCO_3 vkj H^+ cukrh gA oQfidk e pCO_2 de gku l ifrfØ;k dh fn'kk foijhr gk tkrh g ftl l CO_2 vkj H_2O cur gA bl rjg ckbdkckuV oQ :i e Ård Lrj ij xfgr (Trapped) vkj oQfidk rd ifjofgr dkcuMkbvkDlkbM ckgj dh rjiQ iu% CO_2 oQ :i e eDr gk tkrh g (fp=k 17-4)A ifr 100 feyhyhVj fovkDlhtfur jDr }kjk oQfidk e yxHkx CO_2 dh 4 feyh- ek=kk eDr gkrh gA

17.5 श्वसन का नियमन (Regulation of Respiration)

ekuo e viu 'kjhj oQ Årdk dh ekx oQ vu:i 'olu dh y; dk lrfyr vkj fLFkj cuk, j[ku dh ,d egRoi.k {kerk gA ;g fu;eu rf=kdk r=k }kjk liUu gkrk gA efLr"d oQ eM;yk {k=k e ,d fof'k"V 'olu y;oQn fo|eku gkrk g] tk e[; :i l 'olu oQ fu;eu oQ fy, mÙkjnk;h gkrk gA efLr"d oQ ikl {k=k e ,d vU; oQn fLFkr gkrk g ftl **श्वासप्रभावी** ('okl vupu) (Pneumotaxic) oQn dgr g tk 'olu y;oQn oQ dk;k dk l;r (l/kj) dj ldrk gA bl oQn oQ rf=kdk loQr vr%'olu dh vof/ dk de dj ldr g vkj bl idkj 'olu nj (Respiratory rate) dk ifjofrr dj ldr gA y;oQn oQ ikl ,d jlklonh (Chemosensitive) oQn y;oQn oQ fy, vfr lonh gkrk g] tk CO_2 vkj

gkbMktu vk;uk oQ fy, vfr lonh gkrk gA bu inkFkk dh of¼ l ;g oQn lfØ; gkdj 'olu ifØ;k e vko';d lek;ktu djrk g] ftlls ; inkFk fu"dkflr fd, tk loQA egk/euh pki (Aortic arch) vkj xhok /euh (Carotid artery) l tMh lonh ljpuk, Hkh CO_2 vkj H^+ lknrk oQ ifjoru dk igpku ldr g rFkk mipkjkRed dk;okgh gr y;oQn dk vko';d loQr n ldr gA 'olu y; oQ fu;eu e vkDlhtu dh Hkfedk cgr gh egRoghu gA

17.6 श्वसन के विकार (Respiratory disorders)

दमा (Asthma) e 'oluh vkj 'olfudkvk dh 'kFk oQ dkj.k 'okl u oQ le; ?ki?kjkgV gkrh g rFkk 'okl yu e dfBukb gkrh gA

श्वसनी शोथ (Bronchitis) % ;g 'oluh dh 'kFk g ftloQ fo'k"k y{k.k 'oluh e lt u rFkk tyu gkuk g ftlLkl yxkrkj [kkl h gkrh gA

वातस्फीति या एम्फाइसिमा(Emphysema) % ,d fpjdkfyd jkx g ftle oQfidk fHkfÙk {kfrxLr gk tkrh g ftll xl fofue; lrg ?kV tkrh gA /eiku blo e[; dkjdk e ,d gA

व्यावसायिक श्वसन रोग (Occupational Respiratory Disease) % oQN m|kxk e fo'k"kdj tgk iRFkj dh f?kl kb & filkb ;k rkMu dk dk; gkrk g] ogk bru /y d.k fudyr g fd 'kjhj dh lj{kk i.kkyh mUg ijh rjg fu"iHkkoh ugh dj ikrhA nh?kdkyhu iHkkou 'kFk mRiUu dj ldrk g ftul j'ke;rk (j'kh; Årdk dh ipjrk) gkrh g] ftloQ iQyLo:i iQiQMk dk xHkhj udlku gk ldrk gA bu m|kxk oQ Jfedk dk e[kkoj.k dk i;kx djuk pkfg,A

सारांश

dkf'kdk, vikip;h fØ;kvk oQ fy, vkDlhtu dk mi;kx djrh g rFkk Åtk oQ lkFk dkcuMkbvkDlkbM tl gkfudkjd inkFk Hkh mRiUu djrh gA ikf.k;k e dkf'kdkvk rd vkDlhtu ,o ogk l dkcuMkbvkDlkbM dk Hkh ckgj dju oQ fy, db rjg dh fØ;kfof/ fodflr g vkj ftue gekj ikl bl fØ;k oQ fy, ,d i.k fodflr 'olu r=k g ftloQ vrxr nk iQiQM vkj bul tM ok;q ekx gA

'olu dk igyk pj.k 'okl u g ftle ok;eMyh; ok;q oQfidkvk e yh tkrh g (vr%'olu) vkj oQfidkvk l ok;q dk ckgj fudkyk tkrk g (fu%'olu)A vkDlhtfur jfgr jDr vkj oQfidk oQ chp O_2 vkj CO_2 dk fofue;] bu xlk dk jDr }kjk ij 'kjhj e ifjogu vkDlhtu ;Dr jDr vkj Årdk oQ chp O_2 vkj CO_2 dk fofue; vkj dkf'kdkvk }kjk vkDlhtu dk mi;kx (dkf'kdh; 'olu) vU; lfEefyr pj.k gA vr%'olu vkj fu%'olu oQ fy, ok;eMy vkj oQfidk oQ chp fof'k"V vrjki'kd if'k;k] (bVjdkLVy) vkj Mk;kiQke dh lgk;rk l nkc io.krk ink dh tkrh gA bu fØ;kvk e lfEefyr ok;q oQ fofHkUu vk;ru dk Likbjkehvj dh lgk;rk l eki k tk ldrk g ftudk fpfdRlh; o unkfud egRo gA oQfidk ,o Årdk e CO_2 vkj O_2 dk fofue; folj.k }kjk gkrk gA folj.k nj O_2 (pO_2) vkj CO_2 (pCO_2) oQ vkf'kd nkc io.krk mudh ?kyu'khyrk vkj folj.k lrg dh ekVkb ij fuHkj gA ; dkjd gekj 'kjhj e oQfidk l vkDlhtu dk fovkDlhtfur jDr e rFkk jDr l Årdk e

folj.k lxe cukr gA ; dkjd CO_2 oQ vFkkr Årdk l oQfidk e folj.k oQ fy, Hkh vuoQy gkr gA

vkDlhtu dk e[; :i l vkDlhghekXykfcu oQ :i e ifjogu gkrk g oQfidk e tgk pO_2 vf/d jgrk gA vkDlhtu ghekXykfcu l ;fXer gk tkrh g rFkk Årdk e tgk pO_2 de] pO_2 ,o H^+ dh Lkknrk vf/d gkrh g ljyrk l fo;kftr gk tkrh gA yxHkx 70 ifr'kr dkcuMkbvkDlkbM dk ifjogu dkckfud ,ugkbMt ,tkbe dh lgk;rk l ckbdkckuV (HCO_2) oQ :i e gkrk gA 20&25 ifr'kr dkcuMkbvkDlkbM ghekXykfcu }kjk dkckehuk ghekXykfcu oQ :i e ogu dh tkrh gA Årdk e tgk pCO_2 mPp vkj pO_2 fuEu gkrk g] ogk ;g jDr l ;fXer gkrk g_ tcfd oQfidk e tgk pCO_2 fuEu vkj pO_2 mPp jgrk g ;g jDr l fu"dkflr gk tkrh gA

'olu y; efLr"d oQ eM;yk {k=k fLFkr 'olu oQn }kjk cuk, j[kh tkrh gA efLr"d oQ ikl {k=k fLFkr 'okl vupu 'okl iHkkoh (U;ekVfDld) oQn rFkk ,d jlk lonh {k=k 'olu fØ;kfof/ dk ifjofrr dj ldrk gA

अभ्यास

1- to {kerk dh ifjHkk"kk n vkj bldk egRo crk,\
2- lkekU; fu%'olu oQ mijkr iQiQMk e 'k"k ok; oQ vk;ru dk crk,A
3- xlk dk folj.k oQoy oQidh; {k=k e gkrk g] 'olu r=k oQ fdlh vU; Hkkx e ughA D;k\
4- CO_2 oQ ifjogu (VkliikV) dh e[; fØ;kfof/ D;k g_ 0;k[;k dj\
5- oQfidk ok; dh ryuk e ok;eMyh; ok; e pO_2 rFkk pCO_2 fdruh gkxh] feyku dj\
   (i) pO_2 U;u] pCO_2 mPp   (ii) pO_2 mPp] pCO_2 U;u
   (iii) pO_2 mPp] pCO_2 mPp   (iv) pO_2 U;u] pCO_2 U;u
6- lkekU; fLFkfr e vr%'olu ifØ;k dh 0;k[;k dj\
7- 'olu dk fu;eu oQl gkrk g\
8- pCO_2 dk vkDlhtu oQ ifjogu e D;k iHkko g\
9- igkM ij Pk<u oky 0;fDr oQh 'olu ifØ;k e D;k iHkko iMrk g\
10- dhVk e 'olu fØ;kfof/ oQlh gkrh g\
11- vkDlhtu fo;kstu oØ dh ifjHkk"kk n] D;k vki bldh fl XekHk vkÑfr dk dkb dkj.k crk ldr g\
12- D;k vki u vodkl h;rk (gkbikfDl;k) (U;u vkDlhtu) oQ ckj e luk g\ bl lc/ e tkudkjh ikIr dju dh dkf'k'k dj o lkfFk;k oQ chp ppk djA
13- fuEu oQ chp vrj dj%
   (d) IRV (vkb vkj oh) ERV (b vkj oh)
   ([k) vr% 'olu {kerk (IC) vkj fu%'olu {kerk
   (x) to {kerk rFkk iQiQMk dh oQy /kfjrk
14- Tokjh; vk;ru D;k g\ ,d LoLFk eu"; oQ fy, ,d ?kV oQ Tokjh; vk;ru (yxHkx ek=kk) dk vkdfyr dj\

अध्याय 18

शरीर द्रव तथा परिसंचरण

18.1 रुधिर

18.2 लसीका (ऊतक द्रव्य)

18.3 परिसंचरण पथ

18.4 द्विपरिसंचरण

18.5 हृद क्रिया का नियंत्रण

18.6 परिसंचरण से संबंधित रोग

अब तक आप यह सीख चुके हैं कि जीवित कोशिकाओं को ऑक्सीजन पोषण अन्य आवश्यक पदार्थ उपलब्ध होने चाहिए। ऊतकों के सुचारु कार्य हेतु अपशिष्ट या हानिकारक पदार्थ जैसे कार्बनडाइऑक्साइड (CO_2) का लगातार निष्कासन आवश्यक है। अतः इन पदार्थों के कोशिकाओं तक से चलन हेतु एक प्रभावी क्रियाविधि का होना आवश्यक था। विभिन्न प्राणियों में इस हेतु अभिगमन के विभिन्न तरीके विकसित हुए हैं। सरल प्राणी जैसे स्पंज व सिलेंट्रेट बाहर से अपने शरीर में पानी का संचरण शारीरिक गुहाओं में करते हैं, जिससे कोशिकाओं के द्वारा इन पदार्थों का आदान-प्रदान सरलता से हो सके। जटिल प्राणी इन पदार्थों के परिवहन के लिए विशेष तरल का उपयोग करते हैं। मनुष्य सहित उच्च प्राणियों में **रक्त** इस उद्देश्य में काम आने वाला सर्वाधिक सामान्य तरल है। एक अन्य शरीर द्रव **लसीका** भी कुछ विशिष्ट तत्वों के परिवहन मे सहायता करता है। इस अध्याय में आप रुधिर एवं लसीका (ऊतक द्रव्य) के संघटन एव गणों के बारे में पढेंगे। इसमें रुधिर के परिसंचरण को भी समझाया गया है।

18.1 रुधिर

रक्त एक विशेष प्रकार का ऊतक है, जिसमें द्रव्य आधात्री (मैटिक्स) प्लाज्मा (प्लैज्मा) तथा अन्य संगठित संरचनाएं पाई जाती हैं।

18.1.1 प्लाज्मा (प्लैज्मा)

प्रद्रव्य एक हल्के पीले रंग का गाढ़ा तरल पदार्थ है, जो रक्त के आयतन लगभग 55 प्रतिशत होता है। प्रद्रव्य में 90-92 प्रतिशत जल तथा 6-8 प्रतिशत प्रोटीन पदार्थ होते हैं। फाइब्रिनोजन, ग्लोबुलिन तथा एल्बूमिन प्लाज्मा में उपस्थित मुख्य प्रोटीन हैं। फाइब्रिनोजेन की आवश्यकता रक्त थक्का बनाने या स्कंदन में होती है। ग्लोबलिन का उपयोग शरीर

के प्रतिरक्षा तंत्र तथा एल्बूमिन का उपयोग परासरणी संतलन के लिए होता है। प्लाज्मा में अनेक खनिज आयन जैसे Na^{+}, Ca^{++}, Mg^{++}, HCO_3, Cl^{-} इत्यादि भी पाए जाते हैं। शरीर में संक्रमण की अवस्था में होने के कारण ग्लूकोज, अमीनो अम्ल तथा लिपिड भी प्लाज्मा में पाए जाते हैं। रुधिर का थक्का बनाने अथवा स्कंदन के अनेक कारक प्रद्रव्य के साथ निष्क्रिय दशा में रहते हैं। बिना थक्का /स्कंदन कारकों के प्लाज्मा को सीरम कहते हैं।

18.1.2 संगठित पदार्थ

लाल रुधिर कणिका (इरिथ्रोसाइट),श्वेताणु (ल्युकोसाइट) तथा पट्टिकाणु (प्लेटलेट्स) को संयुक्त रूप से संगठित पदार्थ कहते हैं (चित्र 18.1) और ये रक्त के लगभग 45 प्रतिशत भाग बनाते हैं।

इरिथ्रोसाइट (रक्ताणु) या लाल रुधिर कणिकाएं अन्य सभी कोशिकाओं से संख्या में अधिक होती है। एक स्वस्थ मनुष्य में ये कणिकाएं लगभग 50 से 50 लाख प्रतिघन मिमी. रक्त (5 से 5.5 मिलियन प्रतिघन मिमी.) होती हैं। वयस्क अवस्था में लाल रुधिर कणिकाएं लाल अस्थि मज्जा में बनती हैं। अधिकतर स्तनधारियों की लाल रुधिर कणिकाओं में केंद्रक नहीं मिलते हैं तथा इनकी आकृति उभयावतल (बाईकोनकेव) होती है। इनका लाल रंग एक लौहयुक्त जटिल प्रोटीन हीमोग्लोबिन की उपस्थिति के कारण है। एक स्वस्थ मनुष्य में प्रति 100 मिली. रक्त में लगभग 12 से 16 ग्राम हीमोग्लोबिन पाया जाता है। इन पदार्थों की श्वसन गैसों के परिवहन में महत्वपूर्ण भूमिका है। लाल रक्त कणिकाओं की औसत आयु 120 दिन होती है। तत्पश्चात इनका विनाश प्लीहा (लाल रक्त कणिकाओं की कब्रिस्तान) में होता है।

ल्युकोसाइट को हीमोग्लोबिन के अभाव के कारण तथा रंगहीन होने से **श्वेत रुधिर कणिकाएं** भी कहते हैं। इसमें केंद्रक पाए जाते हैं तथा इनकी संख्या लाल रक्त कणिकाओं की अपेक्षा कम, औसतन 6000-8000 प्रति घन मिमी. रक्त होती है। सामान्यतः ये कम समय तक जीवित रहती हैं। इनको दो मुख्य श्रेणियों में बाँटा गया है-कणिकाणु (ग्रेन्यूलोसाइट) तथा अकण कोशिका (एग्रेन्यूलोसाइट)। न्यूट्रोफिल, इओसिनोफिल व बेसोफिल कणिकाणुओं के प्रकार हैं, जबकि लिंफोसाइट तथा मोनोसाइट अकणकोशिका के प्रकार हैं। श्वेत रुधिर कोशिकाओं में न्यूट्रोफिल संख्या में सबसे अधिक (लगभग 60-65 प्रतिशत) तथा बेसोफिल संख्या में सबसे कम (लगभग 0.5-1 प्रतिशत) होते हैं।

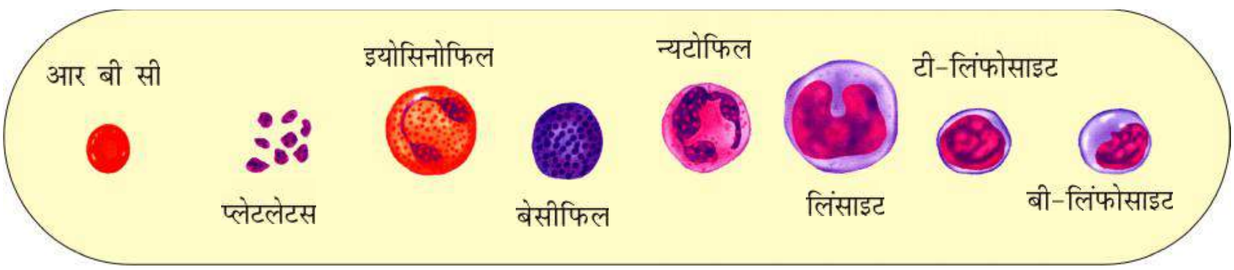

चित्र 18.1 रक्त में संगठित पदार्थ

न्यूट्रोफिल तथा मोनोसाइट (6–8 प्रतिशत) भक्षण कोशिका होती है जो अंदर प्रवेश करने वाले बाह्य जीवों को समाप्त करती है। बेसोफिल, हिस्टामिन, सिरोटोनिन, हिपैरिन आदि का स्राव करती है तथा शोथकारी क्रियाओं में सम्मिलित होती है। इओसिनोफिल (2–3 प्रतिशत) संक्रमण से बचाव करती है तथा एलर्जी प्रतिक्रिया में सम्मिलित रहती है। लिंफोसाइट (20–25 प्रतिशत) मुख्यत: दो प्रकार की हैं – बी तथा टी। बी और टी दोनों प्रकार की लिंफोसाइट शरीर की प्रतिरक्षा के लिए उत्तरदायी हैं।

पट्टिकाणु (प्लेटलेट्स) को **थ्रोम्बोसाइट** भी कहते हैं, ये मैगाकेरियो साइट (अस्थि मज्जा की विशेष कोशिका) के टुकड़ों में विखंडन से बनती हैं। रक्त में इनकी संख्या 1.5 से 3.5 लाख प्रति घन मिमी. होती हैं। प्लेटलेट्स कई प्रकार के पदार्थ स्रवित करती हैं जिनमें अधिकांश रुधिर का थक्का जमाने (स्कंदन) में सहायक हैं। प्लेटलेट्स की संख्या में कमी के कारण स्कंदन (जमाव) में विकृति हो जाती है तथा शरीर से अधिक रक्त स्राव हो जाता है।

18.1.3 रक्त समह (ब्लड ग्रप)

जैसा कि आप जानते हैं कि मनुष्य का रक्त एक जैसा दिखते हुए भी कुछ अर्थों में भिन्न होता है। रक्त का कई तरीके से समूहीकरण किया गया है। इनमें से दो मख्य समह ABO तथा Rh का उपयोग परे विश्व में होता है।

18.1.3.1 ABO समूह

ABO समूह मुख्यत: लाल रुधिर कणिकाओं की सतह पर दो प्रतिजन/एंटीजन की उपस्थिति या अनुपस्थित पर निर्भर होता है। ये ऐंटीजन A और B हैं जो प्रतिरक्षा अनुक्रिया को प्रेरित करते हैं। इसी प्रकार विभिन्न व्यक्तियों में दो प्रकार के प्राकृतिक प्रतिरक्षी/एंटीबोडी (शरीर प्रतिरोधी) मिलते हैं। प्रतिरक्षी वे प्रोटीन पदार्थ हैं जो प्रतिजन के विरुद्ध पैदा होते हैं। चार रक्त समूहों, **A, B, AB, और O** में प्रतिजन तथा प्रतिरक्षी की स्थिति को देखते हैं. जिसको तालिका 18.1 में दर्शाया गया है।

तालिका 18.1 रक्त समह तथा रक्तदाता सयोग्यता

रक्त समह	लाल रुधिर कणिकाओं पर प्रतिजन	प्लाज्मा में प्रतिरक्षी (एंटिबोडीज)	रक्तदाता समह
A	A	एंटी B	A, O
B	B	एंटी A	B, O
AB	AB	अनुपस्थित	AB, A, B,O
O	अनपस्थित	एंटी A,B	O

दाता एवं ग्राही/आदाता के रक्त समूहों का रक्त चढाने से पहले सावधानीपूर्वक मिलान कर लेना चाहिए जिससे रक्त स्कंदन एवं RBC के नष्ट होने जैसी गंभीर परेशानियां न हों। दाता संयोज्यता (डोनर कंपेटिबिलिटी) तालिका 18.1 में दर्शायी गई है।